मूल्य : 20/-

आरएनआई पत्र संख्या : 153/2016-17

वर्ष : ३

फरवरी : २०१९, विक्रमी सम्वत् : २०७५
सृष्टि सम्वत् : १९६०८५३११९, दयानन्दाब्द : १९५

अंक : ८

ओ३म्

॥ कृण्वन्तो विश्वमार्यम् ॥

सत्य और ज्ञान से भरपूर आर्यसमाज नोएडा का मासिक मुखपत्र

# विश्ववारा संस्कृति

## मानवीय जीवन मूल्यों की संरक्षक पत्रिका

"सा प्रथमा संस्कृतिविश्ववारा"

नमो ब्रह्मणे नमस्ते वायो त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि। त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्म वदिष्यामि ऋतं वदिष्यामि सत्यं वदिष्यामि। तन्मामवतु तद्वक्तारमवतु। अवतु माम्। अवतु वक्तारम्॥

ईश्वर का व्यापक ज्ञानस्वरूप पूज्य और सहज स्वभाव जानकर हम उसकी उपासना करें तथा जीवन में सदा सत्य का आचरण करें।

पं. रामचन्द्र देहलवी
स्मृति : 3 फर.

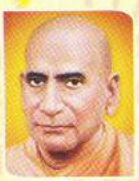

स्वामी श्रद्धानंद
जन्म : 13 फर.

पं. चमूपति
जन्म : 15 फर.

पं. लेखराम
जयंती : 17 फर.

वीर सावरकर
स्मृति : 26 फर.

चंद्र शेखर आजाद
बलिदान : 27 फर.

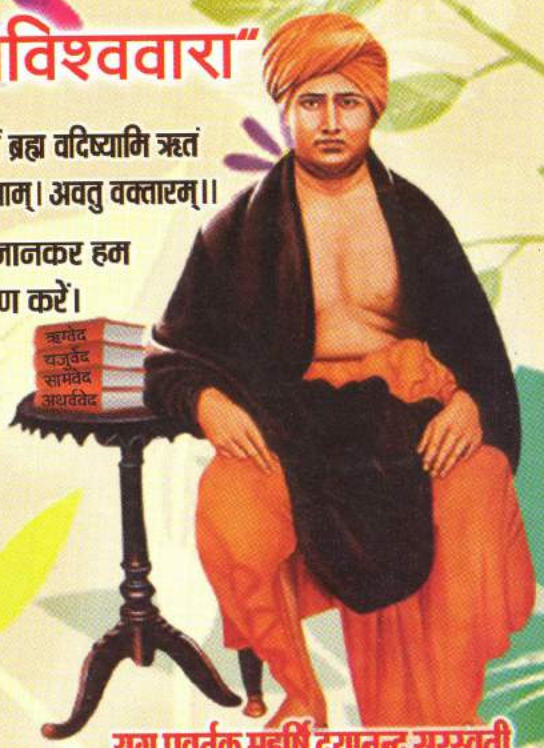


युग प्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती
1824-1883

# अखिल भारतीय संस्कृत आर्ययुव महोत्सव की झलकियां

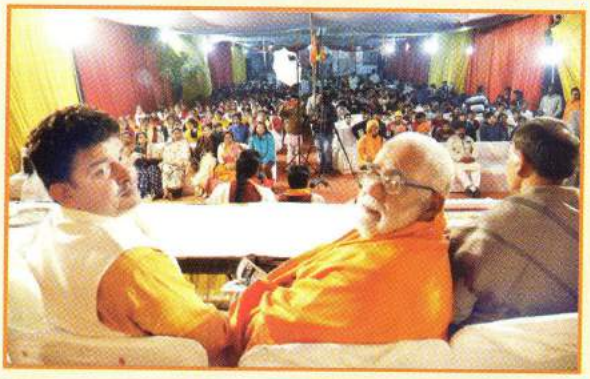

ओ३म्

।। कृण्वन्तो विश्वमार्यम् ।।

# विश्ववारा संस्कृति

## मानवीय जीवन मूल्यों की संरक्षक पत्रिका

**संरक्षक**
श्री आनंद चौहान, श्री सुधीर सिंघल
श्रीमती गायत्री मीना 'प्रधान'

**प्रबंध संपादक**
आर्य कै. अशोक गुलाटी

**संपादक**
आचार्य डॉ. जयेन्द्र कुमार

**व्यवस्थापक**
ओमकार शास्त्री

**प्रकाशक और मुद्रक**
स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक एवं संपादक डॉ. जयेन्द्र कुमार द्वारा वत्स ऑफसेट, मुद्दा हाऊस, सी-ब्लॉक, बारात घर, चौड़ा रघुनाथपुर, सेक्टर-22, नोएडा से मुद्रित एवं आर्य समाज, बी-69, सेक्टर-33, नोएडा, गौतमबुद्धनगर से प्रकाशित किया।

**Title Code : UPMUL-200652**

घोषणा पत्र संख्या : 153/06.06/2016-17

**मूल्य**

| | | | |
|---|---|---|---|
| एक प्रति | : 20/- | वार्षिक | : 250/- |
| पांच वर्ष | : 1100/- | आजीवन | : 2500/- |

विदेश में वार्षिक शुल्क : 3100/-

# अनुक्रमणिका


| क्रम सं. | विषय | पृष्ठ |
|---|---|---|
| 1. | संपादकीय : राजनीतिक पतन... | 2 |
| 2. | आध्यात्मिकता का संबंध... | 3 |
| 3. | स नो बन्धुर्जनिता | 4-5 |
| 4. | भगवद्गीता और धर्म | 6-7 |
| 5. | व्रत-उपवास एवं महर्षि... | 8-9 |
| 6. | अपने को जानो... | 10 |
| 7. | भारवेः अर्थगौरवम् | 11 |
| 8. | महापुरुषों को नमन... | 12-13 |
| 9. | वैचारिक गोष्ठी... | 14 |
| 10. | ऋषि दयानन्द का सत्संग... | 17 |
| 11. | समाचार-सूचनाएं | 22 |
| 12. | सुस्वास्थ्य : मशरूम डिमेंशिया... | 24 |


**पाठकवृंद :** कृपया स्वयं समाज एवं राष्ट्र के उत्थान के लिए 'विश्ववारा संस्कृति' के आजीवन सदस्य बनकर जीवन पथ को पुष्पित, प्रफुल्लित और प्रमुदित करें। आपका चित्र पत्रिका में प्रकाशित होगा। आपके बहुमूल्य सुझावों का हम स्वागत करते हैं।

**लेखकवृंद** से अनुरोध है कि रचना मौलिक एवं अप्रकाशित हो, रचना का लेखन स्पष्ट और सुपाठ्य हो। दो प्रतियां उस रचनाकार को भेज दी जाएगी, जिनकी रचना प्रकाशित हुई है।

**विज्ञापन दर**

| | | |
|---|---|---|
| पिछला कवर पृष्ठ | : | 5100 रुपये |
| कवर पृष्ठ नं.-2 | : | 3100 रुपये |
| कवर पृष्ठ नं.-3 | : | 2500 रुपये |
| पूरा पृष्ठ अंदर | : | 1000 रुपये |
| आधा पृष्ठ अंदर | : | 600 रुपये |

'विश्ववारा संस्कृति' में सभी पद अवैतनिक हैं। प्रकाशित विचारों से संपादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है। सभी विवादों का न्याय क्षेत्र गौतमबुद्धनगर होगा।

**संपादकीय कार्यालय**

आर्य समाज, बी-69,
सेक्टर-33, नोएडा- 201301
गौतमबुद्धनगर, (उ.प्र.)
दूरभाष : 0120-2505731,
9871798221, 7011279734

**Web : www.aryasamajnoida.org, E-mail : info.aryasamajnoida33@gmail.com**

# संपादकीय...

## ।।ओ३म्।।

# राजनीतिक पतन तथा अंधविश्वास की पराकाष्ठा

**अत्यंत** दु:ख पीड़ा तथा विस्मय की बात है कि केरल में सबरीमाला मंदिर में दो महिलाओं ने जाकर पूजा-अर्चना करने का साहस दिखाया। उनके साथ गलत व्यवहार किया गया। उनके साथ हो रहे व्यवहार को देखकर सिर शर्म से झुक जाता है। कनक दुर्गा और बिन्दु इन दोनों को किसी सरकारी शरण स्थल में छुप-छुपकर रहना पड़ रहा है। जिस देश में भगवान श्रीराम ने सबरी के जूठे बेरों को खाया हो उसी देश में मंदिर में पूजा करने की यातना इन दो महिलाओं को मिल रही है। वह भी सुप्रीम कोर्ट के फैसले के बाद! इन दोनों का सिर्फ इतना पाप था कि आठ से पचास वर्ष तक की महिलाओं का प्रवेश वहां निषिद्ध था। सुप्रीम कोर्ट के फैसले के बाद इन दोनों महिलाओं ने वहां पूजा-अर्चना की। परिणामस्वरूप कनक दुर्गा को उसके ससुराल तथा मायके वालों ने अपने-अपने घर से निकालकर बाहर कर दिया। उसकी सास ने उसको इतना मारा की कनक दुर्गा को अस्पताल में भर्ती होना पड़ा। उसके भाई का व्यवहार भी उसके साथ अत्यंत अशोभनीय रहा। परम्परा तथा आस्था के नाम पर यह देश हमेशा जलता रहा है। धार्मिक रीति-रिवाजों को विज्ञान के परिपेक्ष्य में देखने की आवश्यकता है। उनके समर्थन में 55 लाख महिलाओं ने मानव दीवार भी बनायी। किसी भी देश की दो प्रमुख राजनीतिक पार्टियां अपने कर्त्तव्य का परित्याग कर राजनीतिक रोटियां सेक रही हैं तथा अदालत की अवमानना के फैसले को लागू करने में रोड़ा अटका रही है। राम मंदिर पर अदालत के फैसले की दुहाई देने वाले वहां खुलेआम सुप्रीम कोर्ट के फैसले की अवहेलना कर रहे हैं। गणतंत्र दिवस पर आवश्यकता है नये ढंग से विचार करने की। नये भारत का निर्माण ऋषियों के संदेश **'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता:'** को व्यवहारिक रूप से समझने की, जिससे भारत देश पुन: सम्पूर्ण विश्व का गुरु बनाया जा सके।

**■ आचार्य डॉ. जयेन्द्र कुमार**

परम्परा तथा आस्था के नाम पर यह देश हमेशा जलता रहा है। धार्मिक रीति-रिवाजो को विज्ञान के परिपेक्ष्य में देखने की आवश्यकता है। उनके समर्थन में 55 लाख महिलाओं ने मानव दीवार भी बनायी। किसी भी देश की दो प्रमुख राजनीतिक पार्टियां अपने कर्त्तव्य का परित्याग कर राजनीतिक रोटियां सेक रही हैं तथा अदालत की अवमानना का फैसले को लागू करने में रोड़ा अटका रही है। राम मंदिर पर अदालत के फैसले की दुहाई देने वाले वहां खुलेआम सुप्रीम कोर्ट के फैसले की अवहेलना कर रहे हैं। गणतंत्र दिवस पर आवश्यकता है नये ढंग से विचार करने की। नये भारत का निर्माण ऋषियों के संदेश 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता:' को व्यवहारिक रूप से समझने की, जिससे भारत देश पुनः सम्पूर्ण विश्व का गुरु बनाया जा सके।

# आध्यात्मिकता का संबंध मनुष्य के आंतरिक जीवन से है

आध्यात्मिकता के लिए घर छोड़ने या शरीर को कष्ट देने की जरूरत नहीं। बस समस्त मानसिक कमजोरियों का त्यागकर आंतरिक स्तर पर स्थिर करना होता है। आध्यात्मिकता लोगों में बड़ी जिज्ञासा और रहस्य उत्पन्न करती है। तमाम लोग अभी तक आध्यात्मिकता का सही अर्थ नहीं समझ पाए हैं। ऐसे लोग यही समझते हैं कि आध्यात्मिकता का अर्थ अभाव में रहकर जीवन व्यतीत करना व स्वयं को कष्ट देना है, जबकि सच्चाई इसके विपरीत है।

आध्यात्मिकता का संबंध मनुष्य के आंतरिक जीवन से है। आध्यात्मिकता के लिए मनुष्य को अपना घर छोड़ने या शरीर को कष्ट देने की कोई जरूरत नहीं होती। बस उसे अपनी समस्त मानसिक कमजोरियों का त्यागकर और स्वयं को आंतरिक स्तर पर स्थिर करना होता है। इसके बाद उसके भीतर से जो भी आदेश मिले उसे उसका पालन करना होता है। आध्यात्मिकता का मतलब स्वयं को परमसत्ता के सामने पूर्ण रूप से समर्पण कर देना और फिर उसी की प्रेरणानुसार अपने जीवन में विकसित होता है।

अपने आप को जान लेना ही है आध्यात्मिकता। आध्यात्मिक व्यक्ति को निरंतर परमसत्ता से आंतरिक आदेश मिलता रहता है। आध्यात्मिकता का अर्थ मनुष्य की वे सभी गतिविधियां हैं जो उसे निर्मल बनाती हैं, आनंद से भर देती हैं, पूर्णता का अहसास कराती हैं और स्वयं से उसका परिचय कराती हैं। आध्यामिकता में जो सत्य है उसे ही स्वाभाविक रूप से ग्रहण करना है। आध्यात्मिक व्यक्ति अपने अनुभव से यह जान लेता है कि वह स्वयं अपने आनंद का स्रोत है। वैसे आध्यात्मिकता और धर्म एक दूसरे से संबंधित जरूर हैं, लेकिन इसके बावजूद दोनों में अंतर है।

आध्यात्मिकता, सांसारिक भौतिकवाद से ऊपर है जिसकी कोई तुलना नहीं की जा सकती। यह हमारे आंतरिक जिंदगी के विश्वास और चमत्कारों से जुड़ी कड़ी है। यह मानव मूल्य की आधारशिला है जिस पर हम आस्था और भरोसा करते हैं।

आध्यात्मिकता यही ज्ञान और समझ हममें विकसित करती है कि सही मायने में हमारे जीवन का उद्देश्य और अर्थ क्या है। हमारा व्यक्तिगत और सामूहिक कल्याण सच्ची आध्यात्मिकता में ही है इसलिए हमें इसकी तलाश करनी चाहिए और उसे ही अपनाना चाहिए। इसके मार्ग पर चलकर हमारा दुख छोटा हो जाता है और हमारी हर मुश्किल आसान हो

**आध्यात्मिकता के लिए मनुष्य को अपना घर छोड़ने या शरीर को कष्ट देने की कोई जरूरत नहीं होती। बस उसे अपनी समस्त मानसिक कमजोरियों का त्यागकर और स्वयं को आंतरिक स्तर पर स्थिर करना होता है। इसके बाद उसके भीतर से जो भी आदेश मिले उसे उसका पालन करना होता है। आध्यात्मिकता का मतलब स्वयं को परमसत्ता के सामने पूर्ण रूप से समर्पण कर देना और फिर उसी की प्रेरणानुसार अपने जीवन में विकसित होता है। अपने आप को जान लेना ही है आध्यात्मिकता। आध्यात्मिक व्यक्ति को निरंतर परमसत्ता से आंतरिक आदेश मिलता रहता है। आध्यात्मिकता का अर्थ मनुष्य की वे सभी गतिविधियां हैं जो उसे निर्मल बनाती हैं, आनंद से भर देती हैं, पूर्णता का अहसास कराती हैं और स्वयं से उसका परिचय कराती हैं।**

जाती है। आध्यत्मिकता में समाज और संसार के बीच रहते हुए मन की प्रसन्नता बनी रहती है। आध्यात्मिकता से हमारा व्यक्तित्व न केवल निखरता है, बल्कि उसमें मजबूती भी आती है।

○○ प्रीती झा

- **आज अगर खामोश रहे तो कल सब कुछ लुट जायेगा**
- **जिस देश में वेद विद्या के जितेन्द्रिय विद्वान नहीं होते उस देश में पाखंडी, धूर्त और दुराचारी लोग गुरु बनकर समाज को ठगते हैं।**
- **पाखण्ड और अंध विश्वास से मुक्ति पाएं, आर्यसमाज को अपनाएं।**

# स नो बन्धुर्जनिता

स्व. प्रो. उमाकान्त उपाध्याय

इस अंक से ईश्वर स्तुति, प्रार्थना, उपासना के सातवें मंत्र की व्याख्या प्रस्तुत की जा रही है, मनन चिन्तन कर जीवन सफल करें।

- प्रबंध संपादक

भक्तों ने परमेश्वर के साथ परम आत्मीय संबंधों को अनेकों प्रकार से जोड़ने का प्रयास किया है। प्रभु को कभी माता तो कभी पिता, कभी भ्राता, बन्धु, सखा, कभी पालक, प्रेरक, रक्षक के रूप में स्मरण किया है। निस्संदेह ये सारे के सारे संबंध अति भावगर्भित, प्रिय, मनमोहक हैं। लौकिक प्रार्थनाएं हों या बौद्धक प्रार्थनाएं, स्तुतियां हों या अन्य भक्ति भाव, प्रभु को इन रूपों में स्मरण करना भक्त का ही अधिकार है। निम्न मंत्र पर कुछ चिंतन चित्तरमणीय लगता है–

**'स नो बंधुर्जनिता स विधाता धामानि वेद भुवनानि विश्वा। यत्र देवा अमृतमानशानास्तृतीये धामन्नध्यैरयन्त।।** (युज. ३२-१०)

मंत्र पर विचार करने के लिए निम्न खण्डों में इसे विभाजित कर लेने से सुविधा हो जाएगी–

१. सः (परमेश्वर) नः बंधुः- वह परमेश्वर हमारा बंधु है। २. सः नः जनिता- वह प्रभु हमारा उत्पन्न करने वाला है। ३. सः नः विधाता- वह जगदीश्वर हमारा विधाता, हमारे कामों को पूर्ण करने वाला है। ४. सः विश्वा धामानि भुवनानि वेद- वह परमेश्वर सभी लोकों और नाम स्थान जन्मों को जानने वाला है। ५. यत्र तृतीये धामन् देवाः अमृतमानशानाः अध्यैरयन्त- जिस सुख-दुःख से रहित, जीव प्रकृति से भिन्न, नित्यानन्द युक्त मोक्ष स्वरूप धारण करने हारे परमात्मा में मोक्ष के प्राप्त होकर देव (विद्वान लोग) स्वेच्छापूर्वक विचरते हैं।

**1. सः नः बंधुः**- परमेश्वर हमारे बंधु है, बंधु का सीधा सा अर्थ है, 'जिसके साथ हम बंधे हों' 'बध्नाति सौ' जो बांधता है। प्रायः बंधु का प्रयोग रक्त के बंधन और स्नेह के बंधन में अधिक प्रचलित है। किंतु आदर्शों और उद्देश्यों के बंधन से आबद्ध भी सहोदर भाई के समान ही प्रिय, हित, स्नेहपात्र हो जाते हैं।

**(अ) रक्त का बंधन**- बड़ा ही स्वाभाविक है, प्रायः 90-95 प्रतिशत भाइयों में स्वाभाविक स्नेह होता ही है। प्रायः बड़े भाइयों का त्याग और छोटों की सेवावृत्ति, पारस्परिक उपकार और कल्याण की भावना रक्त के बंधन में सहज स्वभाविक ही है।

**(आ) स्नेह का बंधन**- कहते हैं 'समान शीलव्यसनेषु सख्यम्' शील और व्यसन की समानता में मित्रता, बंधुभाव पनप उठता है। मैत्री के संबंध में किसी कवि की उक्ति है 'मनोभूमौ जाता सहज चपलायां विधि वशात्।' भाग्य से मन में मैत्री की लता उग जाती है। जो भी हो, जैसे भी हो 'स्नेह लतिका' बड़ी बलवती है- 'लागी नाही छूटै राम' यह बहुत सटीक उक्ति है। स्नेह पाश कभी-कभी मूढ़ (मुहवैचित्ये) मोहग्रस्त, कर्तव्यभ्रष्ट भी कर देता है।

**बंधनानि किल संति बहूनि, प्रेम रज्जुकृत बंधनमंयत्। दारूभेद निपुणोऽपि षडङ् धिर्निष्क्रियोभवति पंकजबद्ध।।**

भ्रमर सूखे काठ को भी छेद कर निकल जाता है। किंतु स्नेह पाश में बंधकर कमल की कोमल, सुकोमल सरस पंखुड़ियों के बंधन में बंधा रहता है। (इ) आदर्श-उद्देश्य का बंधन- यह बंधन भी किसी भी अन्य बंधन से प्रायः अधिक सुदृढ़ होता है। आदर्शों और उद्देश्यों के लिए घर परिवार, पत्नी-पुत्र, भाई-बहिन, माता-पिता सब का त्याग करने वाले भी संसार में बहुत है। अमर शहीद भगत सिंह, राजगुरु, सुखदेव आदि ऐसे ही स्नेह बंधनों में बंधे थे। पंडित लेखराम, पंडित गुरुदत्त, स्वामी श्रद्धानंद आदि के पारस्परिक स्नेहिल संबंधों का बंधन तो धर्म का ही आदर्श बंधन था। हम आप भी ऋषि और समाज के कई दीवानों को भाई की भांति ही प्यार करते हैं। रक्त, स्नेह, आदर्श आदि जो भी शुद्ध सात्विक बंधन है उनसे हम प्रभु परमेश्वर के साथ भी आबद्ध हैं। मित्र के संबंध में एक प्रसिद्ध श्लोक प्रस्तुत है-

**पापान्निवारयति, योजयते हिताय, गुह्यं निगूहति गुणान् प्रकटी करोति। आपद् गतं च न जहाति, दादाति काले, सन्मित्र लक्षणमिदं प्रवदन्ति सन्तः।।**

यह बंधन भी किसी भी अन्य बंधन से प्राय: अधिक सुदृढ़ होता है। आदर्शों और उद्देश्यों के लिए घर परिवार, पत्नी-पुत्र, भाई-बहिन, माता-पिता सब का त्याग करने वाले भी संसार में बहुत है। अमर शहीद भगत सिंह, राजगुरु, सुखदेव आदि ऐसे ही स्नेह बंधनों में बंधे थे।

पंडित लेखराम, पंडित गुरुदत्त, स्वामी श्रद्धानंद आदि के पारस्परिक स्नेहिल संबंधों का बंधन तो धर्म का ही आदर्श बंधन था। हम आप भी ऋषि और समाज के कई दीवानों को भाई की भांति ही प्यार करते हैं। रक्त, स्नेह, आदर्श आदि जो भी शुद्ध सात्विक बंधन है उनसे हम प्रभु परमेश्वर के साथ भी आबद्ध हैं। मित्र के संबंध में एक प्रसिद्ध श्लोक प्रस्तुत है-

**पापान्निवारयति, योजयते हिताय,**
**गुह्यं निगूहति गुणान् प्रकटी करोति।**
**आपद् गतं च न जहाति, दादाति काले,**
**सन्मित्र लक्षणमिदं प्रवदन्ति सन्तः।।**

संमित्र, सुबंधु, हमारा वास्तविक हितैषी मित्र निम्न कार्य करता है- १. हमें पापों से परे रखता है, पापपंक में फंसने नहीं देता। २. हमें हित के कार्यों में, कल्याणकारी गुण कर्म स्वभाव में संलग्न करता है। ३. हमारी गोपनीयता को प्रकट नहीं करता। ४. हमारे सद्गुणों को प्रकट करता है, उनका बखान करता है। ५. हमें विपत्ति में पड़ा देखकर हमसे अलग नहीं होता, कठिनाइयों विपत्तियों में भी हमारा साथ रहता है। (६) आवश्यकता के समय हमारी सहायता भी करता है। ये सब तो संसारी मित्रों के लक्षण हैं जिनका वर्णन नीतिकार करते हैं।

परमेश्वर तो संसारी बंधु, स्वार्थी बंधु, Fair weather friend नहीं हैं। प्रभु तो हमारे सच्चे सद् बंधु, संमित्र हैं। संसारी मित्र यदि अच्छे हुए, सुसंस्कारी हुए तब तो वे अच्छाई की ओर, सद्गुणों की ओर, कल्याण की ओर प्रेरित करते हैं। संसारी मित्र यदि कुमित्र हुए तो कुचेष्टाओं की ओर, दुर्व्यसनों की ओर प्रेरित करेंगे। संसारी बंधु भाई कुछ काल के लिए 25-50 वर्षों के लिए होते हैं। कभी वे हमें छोड़ देते हैं, कभी कालचक्र उन्हें हमसे अलग करता है। संसारी मित्रों की सीमाएं कालगत, गुणगत, साधन-सुविधा-गत, संस्कार-विचारगत, अनेकानेक सीमाएं, निर्बलताएं हैं। प्रभु का बंधुत्व इन सारी सीमाओं से ऊपर होता है, शाश्वत, जन्म जन्मांतर का होता है। देश काल की सीमाओं से ऊपर का होता है। प्रभु हमारे दुरितों को दूर करते और भद्र, कल्याणकारी गुणधर्म स्वभाव हमें प्राप्त कराते हैं- 'दुरितानि परासुव यद् भद्रं तन्न आसुव। प्रभु सच्चे हितैषी की तरह हमें अच्छी वस्तुएं उपहार में देकर हमें कल्याण के पथ पर नियुक्त कर देते हैं।

**अग्ने सूपायनो भव, सचस्वा नः स्वस्तये।** भगवान हमारे मन इंद्रियों, हृदयों की न्यूनताओं, छिद्रों को पूर्ण करके हमें समर्थ बनाते हैं- 'यन्मे छिद्रं चक्षुषो हृदयस्य मनसो वातितृण्णं बृहस्पतिर्मे तद्दधातु।'

प्रभु तो हमारे ऐसे हितैषी हैं कि उन्होंने हमारे निर्माण में ही हमारी जन्म की घुट्टी में ही बुराइयों से घृणा करने और अच्छाइयों से प्रेम करने की प्रवृत्ति पैदा कर दी है-

**दृष्टवा रूपे व्याकरोत् सत्यानृते प्रजापतिः। अश्रद्धामनृते दधातु श्रद्धां सत्ये प्रजापतिः।।** (यजु. १९-७७)

प्रजापति परमेश्वर ने सत्य और अनृत: उचित-अनुचित के रूपों को देखकर हमारे मन-हृदय बुद्धि-धृति की ऐसी व्यवस्था बना दी कि हमें सत्य में, ऋत में, उचित में श्रद्धा होती है और अनृत-अनुचित, असत्य में घृणा होती है।

प्रभु की मैत्री का, बंधुत्व का एक और प्रकार है- प्रभु की स्तुति, गुणगान। स्तुति करने से प्रीति बढ़ती है, निंदा करने से घृणा पैदा होती है। किंतु जैसी स्तुति करें, जैसा गुण कीर्तन करें वैसा ही अपना चरित्र आचरण बनाये तो इससे प्रीति बढ़ती है। प्रभु दयालु हैं तो हम भी दयालु बनें। प्रभु की दया का अनुभव करें और दूसरों के प्रति दयाभाव रखें।

**2. सः (परमेश्वरः) नः जनिता-** परमेश्वर हम सबको उत्पन्न करने वाले हैं। हम अपने जन्म देने वालों को जनक-जननी कहते हैं। इस संसार में हम प्रत्यक्ष देखते हैं कि हम अपनी माता के शरीर से, पेट से उत्पन्न होते हैं। हमारी उत्पत्ति में माता-पिता की भूमिका सुस्पष्ट समझ में आती है। हमारे शरीर का बाह्य रंग-रूप, हाथ-पैर, नाक नक्शा, दांत-आंख आदि-आदि माता-पिता से प्राप्त होते हैं, और काफी दूर तक हमारा शरीर, हमारे शरीर के अवयव हमारे माता-पिता के शरीर और उनके शरीर के अवयवों से मिलते जुलते हैं। हमारे आंतरिक अंग-प्रत्यंग भी माता-पिता के अंगों से मेल खाते हैं। **(शेष अगले अंक में)**

OO

## सुधी पाठकों से आत्म निवेदन

**कृपया अपने विचारों से हमें अवश्य अवगत करावें ताकि पत्रिका को और सुरुचिपूर्ण बनाया जाए।**

■ **प्रबंध संपादक : 9871798221, 7011279734**

# भगवद्गीता और धर्म

डॉ. दीवान चन्द, डी.लिट.

(गतांक से आगे...)

**कृष्ण की सफलता :** महाभारत का युद्ध कुरुक्षेत्र में हुआ। मैंने वह स्थान देखा जिसकी बाबत कहा जाता है कि वहां कृष्ण और अर्जुन का सम्वाद हुआ। उस स्थान के दोनों ओर दोनों सेनाएं खड़ी होंगी। योद्धा रथों पर बैठते थे और तीसरों से लड़ते थे। युद्ध क्षेत्र भारत के एक भाग में था, विदेशों से इसे कोई संबंध न था। जिस पक्ष को कृष्ण का सहयोग प्राप्त था, उसको जीत हुई। यह धर्म की विजय थी, परंतु व्यापक रूप में कृष्ण के काम का फल क्या था? उसकी मृत्यु के साथ ही कलियुग का आरम्भ हुआ और ज्यों-ज्यों समय बीतता गया स्थिति बिगड़ती गयी।

धर्म के संबंध में गीता के प्रथम भाग में निम्न बातों पर बल दिया गया है- मनुष्य जो कुछ करता है, किसी प्रेरक की प्रेरणा पर करता है। बुद्धि इन प्रेरकों को गुण-भेद की दृष्टि से क्रम में रखती है। शिखर पर कर्त्तव्य पालन का स्थान है। प्रत्येक स्थिति में देखना चाहिए कि धर्म की मांग क्या है। इस मांग का अधिकार अन्य मांगों के अधिकार से अधिक है। कर्त्तव्य पालन में भाव नहीं, अपितु बुद्धि पथ प्रदर्शन करती है। बुद्धि सभी मनुष्यों को एक स्तर पर रखती है। काम करने वाले का हित उतना ही महत्व रखता है, जितना किसी और का हित रखता है।

धर्म की मांग है कि व्यक्ति निष्काम भाव से कर्म करे। प्रत्येक मनुष्य अपनी शिक्षा-दीक्षा, योग्यता, पसंद आदि के आधार पर सामाजिक जीवन में विशेष स्थान पर स्थित होता है। उसे अपने काम में लगा रहना चाहिए। यदि हरेक अपने काम में लगा रहे तो सामूहिक कल्याण भी हो जायेगा। प्रत्येक नस्ल का प्रमुख काम आने वाली नस्ल को अपने दायित्व का बोझ उठाने के योग्य बनाना है। जो लोग समाज में अगुआ है, उनका विशेष उत्तरदायित्व है। जिधर से महानजन गुजरते हैं, वहीं मार्ग बन जाता है।' माता-पिता अध्यापक और विविध क्षेत्रों के नेता उठती हुई नस्ल को ढांचे में ढालते हैं। गीता के 7वें अध्याय में 30 श्लोक हैं और हरेक श्लोक में कृष्ण अपनी बाबत कहते हैं। वह जल में रस, चंद्र और सूर्य में प्रकाश, आकाश में शब्द, पृथिवी में गंध और अग्नि में तेज है वह सभी भूतों का जीवन है और तपस्वियों का तप है। सृष्ट जगत में जड़ पदार्थ है, जीवित वस्तुएं हैं और चेतन जीव है। कृष्ण अपने आपको इन सबका तत्व कहता है।

दर्शनों में 'धर्म' को तत्व या मौलिक गुण के अर्थ में भी लिया गया है, शब्द आकाश का धर्म है, रस जल का धर्म है। कृष्ण के कथन का अभिप्राय यह प्रतीत होता है कि जड़ जगत में जो मौलिक भेद पृथिवी, अग्नि, आकाश आदि को एक दूसरे से भिन्न करते हैं, उनका आधार कृष्ण ही है। जिस अर्थ में हम 'धर्म' पर विचार कर रहे हैं, उसमें हमें कुछ प्राप्त नहीं होता। 9:2 में कृष्ण ऐसे ज्ञान की ओर संकेत करते हैं जो राजविद्या और राज रहस्य है जो पवित्र, उत्तम और धर्मयुक्त है। यह ज्ञान कृष्ण भक्ति ही है इस भक्ति को कृष्ण वेदोक्त आचरण से ऊंचे स्तर पर रखता है। वेदोक्त कर्म करने वाला अपनी कमाई को भोग कर फिर कर्म क्षेत्र में लौट आता है, कृष्ण भक्त को लौटना नहीं पड़ता।

शुभ कर्मों और भक्ति के सापेक्ष मूल्य की बाबत 9:30,31 में कहा है। यदि कोई बड़ा दुराचारी भी भक्ति भाव से मुझे भजता है, तो उसे साधु ही समझना चाहिए, क्योंकि वह यथार्थ निश्चय वाला है। वह जल्दी ही धर्मात्मा हो जाता है और स्थायी शांति को प्राप्त होता है, मेरा भक्त विनष्ट नहीं होता। पहले श्लोक में तो कहा है कि भक्त ही हालत में दुराचार की पूरी उपेक्षा करनी चाहिए, उसकी भक्ति ही

धर्म की मांग है कि व्यक्ति निष्काम भाव से कर्म करे। प्रत्येक मनुष्य अपनी शिक्षा-दीक्षा, योग्यता, पसंद आदि के आधार पर सामाजिक जीवन में विशेष स्थान पर स्थित होता है। उसे अपने काम में लगा रहना चाहिए। यदि हरेक अपने काम में लगा रहे तो सामूहिक कल्याण भी हो जायेगा। प्रत्येक नस्ल का प्रमुख काम आने वाली नस्ल को अपने दायित्व का बोझ उठाने के योग्य बनाना है। जो लोग समाज में अगुआ है, उनका विशेष उत्तरदायित्व है। जिधर से महानजन गुजरते हैं, वहीं मार्ग बन जाता है।' माता-पिता अध्यापक और विविध क्षेत्रों के नेता उठती हुई नस्ल को ढांचे में ढालते हैं। गीता के 7वें अध्याय में 30 श्लोक हैं और हरेक श्लोक में कृष्ण अपनी बाबत कहते हैं।

पर्याप्त है। दूसरे श्लोक में कहा है कि भक्ति दुराचारी को शीघ्र ही बल देती है। क्रिया और भाव असंबद्ध अंश नहीं, एक ही चेतना के पक्ष हैं।

12वें अध्याय के अंतिम श्लोकों में कृष्ण ने ऐसे मनुष्य के आचार और आचरण का चित्र दिया है जो उसे प्यारा है। कृष्ण को प्यार करने वाले तो बहुतेरे हैं, इन श्लोकों में कहा गया है कि कृष्ण किन लोगों को अपने प्रेम का पात्र समझते हैं। यह तो हम आशा करते ही हैं कि ऐसा पुरुष कृष्ण भक्त हो। यह भक्ति कहां तक जाती है?

कृष्ण भक्त अपने मन और बुद्धि को कृष्ण को अर्पण कर देता है, स्वाधीन विचार का अधिकार छोड़ देता है। कृष्ण भक्त हर प्रकार के 'आरंभ' को त्याग देता है। हमारे कर्मों में शिखर के कर्म हमारे संकल्प का फल होते हैं, कृष्ण भक्त के लिए संकल्प अनावश्यक हो जाता है। नैतिक जीवन में प्रमुख भेद शुभ और अशुभ का होता है। कृष्ण भक्त के लिए यह भेद भी नहीं रहता, वह शुभ और अशुभ दोनों का त्याग कर देता है।

चेतना में ज्ञान, क्रिया और भाव तीन पक्ष होते हैं, कृष्ण भक्त भावमय ही हो जाता है। जो चिन्ह कृष्ण के प्यारे के आचार और आचरण में विद्यमान होते हैं, उन्हें अध्याय के अंतिम श्लोक में 'धर्ममय अमृत' का नाम दिया गया है। जो मनुष्य किसी से द्वेष नहीं करता, सब प्राणियों को मित्र भाव से देखता है, करुणा करता है, जो मोह और अहंकार से विमुक्त है, दुख-सुख में समान है, क्षमा करता है, जो सदा संतुष्ट है, योगी है, संयमी है, दृढ़ निश्चयी है- ऐसा मेरा भक्त जिसने मन और बुद्धि को मेरे अर्पण कर दिया है मुझे प्यारा है। जो कामनारहित, शुद्ध, चतुर, पक्षपातरहित, अभय है, जिसने स्वाधीन क्रिया को छोड़ दिया है, ऐसा मेरा भक्त मुझे प्यारा है। जो न हर्षित होता है न द्वेष करता है, जो शोक नहीं करता, कामना नहीं करता, जो शुभ और अशुभ को त्याग चुका है- ऐसा भक्त मुझे प्यारा है।

चेतना में ज्ञान, क्रिया आर भाव तीन पक्ष होते हैं, कृष्ण भक्त भावमय ही हो जाता है। जो चिन्ह कृष्ण के प्यारे के आचार और आचरण में विद्यमान होते हैं, उन्हें अध्याय के अंतिम श्लोक में 'धर्ममय अमृत' का नाम दिया गया है। जो मनुष्य किसी से द्वेष नहीं करता, सब प्राणियों को मित्र भाव से देखता है, करुणा करता है, जो मोह और अहंकार से विमुक्त है, सुख-दुःख में समान है, क्षमा करता है, जो सदा संतुष्ट है, योगी है, संयमी है, दृढ़ निश्चयी है- ऐसा मेरा भक्त जिसने मन और बुद्धि को मेरे अर्पण कर दिया है मुझे प्यारा है। जो कामनारहित, शुद्ध, चतुर, पक्षपातरहित, अभय है।

जो शत्रु और मित्र में भेद नहीं करता, जो मान-अपमान, सर्दी-गर्मी, सुख-दुख में समान रहता है, जो आसक्ति से विमुख है, जो निंदा आर स्तुति को तुल्य देखता है, ध्यान में लगा रहता है, जो कुछ मिल जाये उस पर संतुष्ट है, जिसका घरघाट नहीं, जिसकी मति स्थिर है, जो भक्तिमान है, वह मनुष्य मुझे प्यारा है और जो श्रद्धावान मेरे भक्त ऊपर कहे हुए धर्ममय अमल का सेवन करते हैं, वह मुझे बहुत प्यारे हैं। (12:13, 20)

इन श्लोकों के पाठ से पता लगता है कि कृष्ण ने अपने प्यारे के जीवन में आचरण की अपेक्षा आचार को अधिक महत्व दिया है। अनन्य भक्त की हालत में होना भी ऐसा ही चाहिए, वह हर प्रकार के आरंभ को त्याग चुका है, शुभ और अशुभ में उसके लिए कोई भेद नहीं रहा। उपनिषद में स्वाध्याय, यज्ञ, दान और तप को धर्म के स्कंध बताया गया है, स्वयं गीता (18:5) में कहा है कि यज्ञ दान और तप-कर्म को त्यागना नहीं चाहि, वे तीनों बुद्धिमान पुरुष को पवित्र करने वाले हैं। ऊपर के श्लोकों में इन तीनों की ओर भी संकेत नहीं। संभवत: कारण यह है कि जो भक्त अपनी बुद्धि को कृष्ण के अर्पण कर चुका है, उसे बुद्धि की पवित्रता की अब चिंता नहीं होनी चाहिए। आचार के संबंध में विशेष बल आत्म-पर्याप्तता और साम्य पर दिया गया है। हमारे दु:खों का मुख्य कारण यह होता है कि आंतरिक और बाहरी संबंधों में सामंजस्य नहीं होता। वातावरण का तापमान हमारे रक्त के तापमान के अनुकूल नहीं होता, प्रतिपक्ष जो हानि शरीर में होती रहती है, उसे पूरा करने की सामग्री प्राप्त नहीं होती, विश्राम और सुरक्षा के लिए उचित स्थान नहीं होता।

ऐसी स्थिति में आत्म-पर्याप्तता की मांग यह है कि मनुष्य इस स्थिति की पूर्णरूप में उपेक्षा करे, वह गर्मी-सर्दी में, सुख-दुख में साम्य कायम रखे, जो कुछ भी प्राप्त हो, उस पर संतुष्ट हो, रहने के लिए घर नहीं, तो न सही, वह इस आवश्यकता से ऊपर उठ सके। प्राकृतिक वातावरण से भी अधिक महत्व सामाजिक वातावरण का है। ○○

# व्रत-उपवास एवं महर्षि दयानन्द

**मनमोहन कुमार आर्य**
देहरादून, उत्तराखंड

आजकल हमारे देश के बहुत से लोग नाना दिवसों पर व्रत व उपवास आदि रखते और आशा करते हैं कि उससे उनको लाभ होगा। महर्षि दयानन्द चारों वेदों व सम्पूर्ण वैदिक व अवैदिक ग्रन्थों के अपूर्व विद्वान थे। उन्होंने समाधि अवस्था में ईश्वर का साक्षात्कार भी किया था और अपने विवेक से व्रत-उपवासों एवं इसी प्रकार के अन्य कर्मकाण्डों की असलियत को जाना था। सत्य व असत्य का ज्ञान कराने के लिए उन्होंने व्रत व उपवास का उल्लेख स्वलिखित ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश के एकादशसमुल्लास में किया है।

महर्षि दयानन्द ने एक प्रश्न प्रस्तुत किया है कि गरुडपुराणादि जो ग्रन्थ हैं, क्या यह वेदार्थ वा वेद की पुष्टि करने वाले हैं या नहीं? इसका उत्तर देते हुए वह कहते हैं कि नहीं, किन्तु वेद के विरोधी और उलटे चलते हैं तथा तन्त्र ग्रन्थ भी वैसे ही हैं। जैसे कोई मनुष्य किसी एक का मित्र और सब संसार का शत्रु हो, वैसा ही पुराण और तन्त्र ग्रन्थों को मानने वाला पुरुष होता है क्योंकि एक दूसरे से विरोध कराने वाले ये ग्रन्थ हैं। इनका मानना किसी विद्वान का काम नहीं किन्तु इन को मानना अविद्वता-अज्ञान-अन्धविश्वास है। शिवपुराण में त्रयोदशी, सोमवार, आदित्यपुराण में रवि, चन्द्रखण्ड में सोमग्रह वाले मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनैश्चर, राहु, केतु के वैष्णव एकादशी, वामन की द्वादशी, नृसिंहवा अनन्त की चतुर्दशी, चन्द्रमा की पौर्णमासी, दिक्पालों की दशमी, दुर्गा की नौमी, वसुओं की अष्टमी, मुनियों की सप्तमी, कार्तिक स्वामी की षष्ठी, नाग की पंचमी, गणेश की चतुर्थी, गौरी की तृतीया, अश्विनीकुमार की द्वितीया, आद्यादेवी की प्रतिपदा और पितरों की अमावस्या पुराण रीति से ये दिन उपवास करने के हैं। और सर्वत्र यही लिखा है कि जो मनुष्य इन वार और तिथियों में अन्न, पान ग्रहण करेगा वह नरकगामी होगा।

अब 'निर्णयसिन्धु', 'धर्मसिन्धु', 'व्रतार्क' आदि ग्रन्थ जो कि प्रमादी लोगों के बनाये हैं, उन्हीं में एक-एक व्रत की ऐसी दुर्दशा की है कि जैसे एकादशी को शैव, दशमी, विद्धा, कोई द्वादशी में एकादशी व्रत करते हैं अर्थात् क्या बड़ी विचित्र पोपलीला है कि भूखे मरने में भी वाद विवाद ही करते हैं। जो एकादशी का व्रत चलाया है उस में उनका अपना स्वार्थपन ही है और दया कुछ भी नहीं। वे कहते हैं- 'एकादश्यामन्ने पापानि वसन्ति।।'

जितने पाप हैं वे सब एकादशी के दिन अन्न में वसते हैं। इसके लिखने वाले पोप जी से पूछना चाहिये कि किस के पाप उस में बसते हैं? तेरे वा तेरे पिता आदि के, जो सब के पाप एकादशी में जा बसें तो एकादशी के दिन किसी को दुःख न रहना चाहिये। ऐसा तो नहीं होता किन्तु उल्टा क्षुधा आदि से दुःख होता है। दुःख पाप का फल है। इससे भूखे मरना पाप है।

ब्रह्मलोक में एक वेश्या थी। उस ने कुछ अपराध किया। उस को शाप हुआ कि तू पृथिवी पर गिर। उस ने

**महर्षि दयानन्द ने एकादशी सहित सभी व्रतों का वास्तविक स्वरूप लिख कर भोली भाली धर्मपारायण जनता का अपूर्व हित किया है। हम आशा करते हैं कि व्रत व उपवास आदि रखने वाले सभी धर्मप्रेमी महर्षि दयानन्द के शब्दों पर निष्पक्ष होकर विचार करेंगे जिससे उनको इसका लाभ प्राप्त हो सके। महर्षि दयानन्द ने सत्य के ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने को अपने जीवन का उद्देश्य बनाया था, उसी का परिणाम उनके यह विचार और उनका सत्यासत्य विषयों का ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश है। वेदों में ईश्वर की आज्ञा भी यही है कि सभी मनुष्य सत्य को स्वीकार करें और असत्य का त्याग करें। आजकल अनेक चैनलों पर फलित ज्योतिष और व्रत-उपवास के अन्धविश्वास को जनता में परोसा जाता है। जनता दुविधा में फंसी है वह किसका विश्वास करे, किसका न करे। महर्षि दयानन्द का मत है कि कोई भी कार्य करने से पूर्व उसके सभी पहलुओं पर विस्तार से विचार कर उसकी यथोचित परीक्षा कर लेनी चाहिये और असत्य का त्याग व सत्य को स्वीकार करना चाहिये।**

स्तुति की कि मैं पुन: स्वर्ग में क्योंकर आ सकूंगी? उसने कहा जब कभी एकादशी के व्रत का फल तुझे कोई देगा तभी तू स्वर्ग में आ जायेगी। वह विमान सहित किसी नगर में गिर पड़ी। वहां के राजा ने उस से पूछा कि तू कौन है। तब उस ने सब वृतान्त कह सुनाया और कहा कि जो कोई मुझे एकादशी का फल अर्पण करे तो फिर भी स्वर्ग को जा सकती हूं। राजा ने नगर में खोज कराया। कोई भी एकादशी का व्रत करने वाला न मिला। किन्तु एक दिन किसी मूर्ख स्त्री पुरूष में लडाई हुई थी। क्रोध से स्त्री दिन रात भूखी रही थी। दैवयोग से उस दिन एकादशी ही थी। उस ने कहा कि मैंने एकादशी जानकर तो नहीं की, अकस्मात् उस दिन भूखी रह गई थी। ऐसे राजा के भृत्यों से कहा। तब तो वे उस को राजा के सामने ले आये। उस से राजा ने कहा कि तू इस विमान को छू। उसने छूआ तो उसी समय विमान ऊपर को उड़ गया। यह तो विना जाने एकादशी के व्रत का फल है। जो जान कर करे तो उस के फल का क्या पारावार है!!

इस पर टिप्पणी कर महर्षि दयानन्द ने लिखा है-वाह रे आंख के अन्धे लोगों! जो यह बात सच्ची हो तो हम एक पान का बीड़ा जो कि स्वर्ग में नहीं होता, भेजना चाहते हैं। सब एकादशी वाले अपना-अपना फल हमें दे दो। जो एक पान का बीड़ा ऊपर को चला जायेगा तो पुन: लाखों करोड़ों पान वहां भेजेंगे और हम भी एकादशी किया करेंगे और जो ऐसा न होगा तो तुम लोगों को इस भूखे मरने रूप आपत्काल से बचावेंगे।

इन चौबीस एकादशियों के नाम पृथक-पृथक रखे हैं। किसी का 'धनदा' किसी का 'कामदा' किसी का 'पुत्रदा' किसी का 'निर्जला'। बहुत से दरिद्र बहुत से कामी और बहुत से निर्वंशी लोग एकादशी करके बूढ़े हो गये और मर भी गये परन्तु धन, कामना, और पुत्र प्राप्त न हुआ और ज्येष्ठ महीने के शुक्लपक्ष में कि जिस समय एक घड़ी भर जल न पावे तो मनुष्य व्याकुल हो जाता, व्रत करने वालों को महादु:ख प्राप्त होता है।

विशेष कर बंगाल में सब विधवा स्त्रियों को एकादशी के दिन बड़ी दुर्दशा होती है। महर्षि दयानन्द आगे लिखते हैं कि गर्भवती वा सद्योविवाहिता स्त्री, लड़के वा युवापुरुषों को तो कभी उपवास न करना चाहिये। परन्तु किसी को करना भी हो तो जिस दिन अजीर्ण हो, क्षुधा न लगे, उस दिन शर्करावत् (शर्बत) वा दूध पीकर रहना चाहिये। जो भूख में नहीं खाते और विना भूख के भोजन करते हैं वे दोनों रोगसागर में गोते खाते व दु:ख पाते हैं। इन प्रमादियों के कहने लिखने का प्रमाण कोई भी न करे।

महर्षि दयानन्द ने अपने उपर्युक्त शब्दों में एकादशी सहित सभी व्रतों का वास्तविक स्वरूप लिख कर भोली भाली धर्मपारायण जनता का अपूर्व हित किया है। हम आशा करते हैं कि व्रत व उपवास आदि रखने वाले सभी धर्मप्रेमी महर्षि दयानन्द के शब्दों पर निष्पक्ष होकर विचार करेंगे जिससे उनको इसका लाभ प्राप्त हो सके। महर्षि दयानन्द ने सत्य के ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने को अपने जीवन का उद्देश्य बनाया था, उसी का परिणाम उनके यह विचार और उनका सत्यासत्य विषयों का ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश है। वेदों में ईश्वर की आज्ञा भी यही है कि सभी मनुष्य सत्य को स्वीकार करें और असत्य का त्याग करें। आजकल अनेक चैनलों पर फलित ज्योतिष और व्रत-उपवास के अन्धविश्वास को जनता में परोसा जाता है। जनता दुविधा में फंसी है वह किसका विश्वास करे, किसका न करे।

महर्षि दयानन्द का मत है कि कोई भी कार्य करने से पूर्व उसके सभी पहलुओं पर विस्तार से विचार कर उसकी यथोचित परीक्षा कर लेनी चाहिये और असत्य का त्याग व सत्य को स्वीकार करना चाहिये। इसी से मनुष्य के जीवन का कल्याण होता है।

OO

## प्रेरक विचार

- किसी को पीड़ा दिए बिना, किसी को सताए बिना, किसी की हानि किए बिना अपने बाहुबल अथवा मस्तिष्क बल पर जो धन व अन्न कमाया जाता है वही मन को शुद्ध रख सकता है।
- वाणी में मिठास हो, सत्य बोलो परंतु ऐसा कड़वा सत्य न हो जो दूसरों के हृदय को चीर डालने वाला हो।
- मन, वचन और कर्म से दूसरों का उपकार करना अपने को प्रभु के समीप करने का सरल उपाय है।
- अपने जीवन को सादा बनाओ, बहुत थोड़ी वस्तुओं से निर्वाह करो।
- एक बार मन भगवत रस का स्वाद पा ले तो फिर कामना पर सहज ही विजय प्राप्त की जा सकती है।

# अपने को जानो...

**डॉ. महेश विद्यालंकार**

चाहे व्यक्ति कितना धनवान, बलवान, साधन सम्पन व ज्ञानी हो जाये, शास्त्र पढ़ ले, प्रवक्ता बन जाये और किताबें भी लिख ले, यदि उसमें जीने की कला, कर्मों की सुगन्ध, आत्मज्ञान तथा परमात्मबोध नहीं है, तो सब कुछ बेकार है। दुनिया में अधिकांश व्यक्ति दिव्य परमात्मा को जाने बिना ही चले जाते हैं। जैसे आये वैसे ही चले गये। जिसे आत्मबोध नहीं उसे परमात्मबोध कैसे होगा?

जिसने खुद को नहीं जाना, वह खुदा को क्या जानेगा? नित्य लोगों को मरते हुये देखते हैं, फिर भी अज्ञानता के कारण अपने मरने के बारे में तथा अमरआत्मा की नहीं सोचते हैं। बहुत सारे तो मुत्यु के नाम से ही कांपने लगते हैं। अरे भाई जिसने आना ही है उससे डरना क्या।

हम स्वयं को ऐसा बनायें कि जिस प्रकार हम अतिथि का स्वागत करते हैं, वैसे ही मृत्यु का भी करें। मृत्यु अतिथि ही तो है, जिसकी आने की कोई तिथि नहीं। परन्तु यह तभी सम्भव है जब हम परमात्मा के समीप जायें। जितने हम परमात्मा से दूर होते जायेंगे, उतने भोगों, रोगों व दुखों में फंसते जायेंगे। प्रत्येक इंसान को प्रातः उठकर तीन बातें जरूर सोचनी व दोहरानी चाहिये-

1. मैं इस दुनिया में किस लिये आया हूं? जिस लिये आया हूं उस दिशा में कुछ कर रहा हूं या नहीं? नहीं कर रहा हूं तो करने की इच्छाशक्ति व संकल्प दृढ़ करना चाहिये।
2. आया हूं तो एक दिन जरूर जाऊंगा। अमर होकर सदा रहने के लिये नहीं आया हूं।
3. जब जगत से जाऊंगा, तो क्या साथ ले जाऊंगा? साथ ले जाने के लिये धर्मकर्म, दानपुण्य, सत्कर्म आदि नहीं इकट्ठे किये तो करने की सोच व इच्छा जागृत कर लेनी चाहिये। प्राणी अकेला ही जन्म धारण करता है और अकेला ही देह छोड़ता है। किसी को पता नहीं जीव कहां से किस योनी से आता है, और किस योनी में जायेगा।

अकेला ही अपने किये हुए अच्छे और बुरे कर्मो का फल भोगता है। जन्म, बचपन, शैशव, यौवन, वृद्धावस्था और फिर मृत्यु- यह चक्र निरन्तर चल रहा है। दुनिया में रिश्ते, नाते, संबंध, भाई-बन्धु सभी मरने के बाद समाप्त हो जाते है। एक भी रिश्ता नहीं रह जाता है। केवल प्रभु का रिश्ता सदा बना रहता है। वही सच्चा और स्थाई है। उपनिषद कहता है- उठो! जागो। अपने को सम्भालो।

जिस उद्देश्य के लिये यह मूल्यवान मानव जीवन मिला है, उस दिशा में सोचो, समझो और आगे बढ़ो। निराश, हताश नहीं होना है। जीवन की धारा को बदलना है, संसार की बातों से अपने को हटाना और ईश्वर में मन लगाना है। ईश्वर में मन लगाने का सही अर्थ है, ईश्वरीय गुणों को अपने में लाने का निरंतर प्रयत्न। ईश्वर सभी प्राणियों का पिता है। उसके प्राणियों से प्यार, संवेदना व सेवा की भावना और इसी भावना के साथ उनके दुखों को बांटना भी ईश्वर को मन में लगाना है।

ईश्वर में मन लगाने का अर्थ, संसार से वैराग्य नहीं है, बल्कि अपने संसारिक कर्त्तव्यों को काम, क्रोध, लोभ, मोह व अंहकार से दूर रहते हुये पूरा करना है। इसमें देश, समाज, माता-पिता, मित्र , बन्धु व संबंधी सभी आ जाते है। तभी जीवन उदेश्यपूर्ण होगा।

जिसने खुद को नहीं जाना, वह खुदा को क्या जानेगा? नित्य लोगों को मरते हुये देखते हैं, फिर भी अज्ञानता के कारण अपने मरने के बारे में तथा अमरआत्मा की नहीं सोचते हैं। बहुत सारे तो मुत्यु के नाम से ही कांपने लगते है। अरे भाई जिसने आना ही है उससे डरना क्या। हम स्वयं को ऐसा बनायें कि जिस प्रकार हम अतिथि का स्वागत करते हैं, वैसे ही मृत्यु का भी करें। मृत्यु अतिथि ही तो है, जिसकी आने की कोई तिथि नहीं। परन्तु यह तभी सम्भव है जब हम परमात्मा के समीप जायें। जितने हम परमात्मा से दूर होते जायेंगे, उतने भोगों, रोगों व दुखों में फंसते जायेंगे। प्रत्येक इंसान को प्रातः उठकर तीन बातें जरूर सोचनी व दोहरानी चाहिये- मैं इस दुनिया में किस लिये आया हूं? जिस लिये आया हूं उस दिशा में कुछ कर रहा हूं या नहीं? नहीं कर रहा हूं तो करने की इच्छाशक्ति व संकल्प दृढ़ करना चाहिये। आया हूं तो एक दिन जरूर जाऊंगा। अमर होकर सदा रहने के लिये नहीं आया हूं। जब जगत से जाऊंगा, तो क्या साथ ले जाऊंगा? साथ ले जाने के लिये धर्मकर्म, दानपुण्य, सत्कर्म आदि नहीं इकट्ठे किये तो करने की सोच व इच्छा जागृत कर लेनी चाहिये। प्राणी अकेला ही जन्म धारण करता है और अकेला ही देह छोड़ता है।

# भारवेः अर्थगौरवम्

डॉ. शिव प्रसाद शर्मा

**भारतीय**–साहित्यशास्त्रे काव्यस्वरूपविमर्शने काव्य शास्त्रिभिर्निरूपितं यत् 'शब्दार्थौ काव्यम्।' तत् शब्दार्थौ उभावपि काव्यस्य शरीरमिति सर्वेः स्वीक्रियते। यत्र केवलं शब्दानां प्राधान्यां वर्तते, तत्र अधमकाव्यं भवति यदि शब्दः काव्यस्य शरीरम्, तत् आत्मा प्राणा वा अर्थः, प्राणान् विना शरीरं निश्चेतनं अकर्मण्यमेव भवति। अतः कविमूर्धन्यपराणां कालिदासप्रभृतीनां काव्यनाटकेषु अपि नास्ति इयत्ता अर्थगौरवस्य, तथापि महाकविभारविः अर्थगौरवेण सर्वानतिशेते।

महाकविभारविः संस्कृतवाङ्मयस्य जाज्वल्यमानः मणिः स्वकीयार्थगौरवेण महाकविपङ्क्तौ मूर्धानमधिरोहति। अयं दाक्षिणात्यो ब्राह्मणः यज्ञः श्रीविष्णुमित्रस्य सभामण्डलमण्डनः, अन्यतमः पण्डित आसीत्। बाल्याकालादेव आसीत् इति श्रूयते स्म।

अयं महापुरुषः मातापित्रो आनन्दवर्धनः ईसायाः षष्ठशताब्द्याः उत्तराद्धे स्वजन्मना भारतभूतिः समलंचकार। 'किरातार्जुनीयं महामाव्यम्' अस्य काव्यप्रतिभां राजनीतिशास्त्रविचक्षणतां च प्रकटयति। अत्र दुर्योधनस्य कूटनीतिचर्चा सामान्यनीतिचर्चा च सचेतसां चेतः चमत्करोति। नीतिवचनेषु गूढार्थः गुम्फितः महाकविना। नीतिवचनेषु  गुम्फितं अर्थगौरवं यथा–

**प्रलीनभूपालमपि स्थिरायति प्रशासदावारिधिमण्डलं भुवः।**
**स चिन्तयत्येव मिथस्त्वदेश्यतींरहो दुरन्ता बलवद्विरोधिता।।**

अत्र 'अहो दुरन्ता बलवद्विरोधिता' एषः पद्यांशः नीतिगर्भः अर्थगौरवस्य बीजरूपेण स्थितः। नीतिं विनापि अर्थगौरवं कविना गुम्फितं, तदुदाह्रियते। वनेचरः युधिष्ठिरेण पृष्टः दुयोधनस्य निचर्यां कार्यपद्धतिं वर्णयन् कथयति, यत्–

**कथाप्रसङ्गेषु जनैरुदाहृतादनुस्मृताऽऽखण्डलसूनुविक्रमः।**
**तवाभिधानात्व्यथते नताननः सुदुस्सहान् मंत्रपदादिवोरगाः।।**

अत्रार्थ गौरवम् 'आखण्डलसूनुविक्रमः', 'तवाभिधानात्' इत्येत्तत् पदद्वयं चरितार्थयति। तदित्थम् आखेण्डलसूनुः विष्णुः तस्य विः=पक्षी गरुडः तस्य क्रमः=पादसंचारः, तस्मात् तवाभिधानात्, तश्च= तार्क्ष्यः वश्च= वासुकिः, अर्थात् यथा गरुडस्य नामग्रहणात् सर्पो विभेति, तथा तव=अर्जुनस्य नामश्रवणान् दुर्योधनः विभेति। यतो हि 'नामैकदेशा नामग्रहणेन गृह्यन्ते' इति न्यायः। किरातार्जुनीय एवं द्वितीयसर्गे गूढ़राजनीतिवर्णन–प्रसङ्गे यधिष्ठिरमुखेन भीमसेनस्य प्रशंसां प्रकटयता कविना स्वीया मान्या काव्यपरिभाषापि प्रतिपादिता यथा–

**स्फुटता न पदैरपाकृता न च न स्वीकृतमर्थगौरवम्।**
**रचिता पृथगर्थता गिरां न च सामर्थ्यमपोहितं क्वचित्।।**

यतौ घटे समुद्रस्थितिरिव स्वल्पशब्दैरेव अनेव महताम् अर्थानां प्रकटनं पाषाणत्रयमिति विपश्चितैः समालोचितम्। टीकाकारमूर्धन्येन सकलशास्त्र विशारश्रीमल्लिनाथेन तद्विवरणारम्भे 'नारिकेलफलसम्मितं वयो भाववेरिति' प्रतिपादितम्। अल्पाक्षरेषु बहुलार्थस्य सन्निवेशरूपम्, अर्थगौरवम् परिणामे सुखद इति हृदि निधाय निजां कविता परिणामसुखदां स्तौति कविः स्वयमेव। यथा–

**परिणामसुखे गरीयसी व्यथतेऽस्मिन् वचसिं क्षतौजसाम्।**
**अतिवीर्यवतीव भेषजे बहुरल्पीयसि दृश्यते गुणः।।**

महाकवेः भारवेः एकैव रचना किरातार्जुनीयम् प्राप्यते। राजनीतिप्रवणे काव्येऽस्मिन् विविधाऽलङ्कृतीनां काव्यशास्त्रीयमान्यतानां नैपुण्यवेभवानां, काव्यलक्षणाङ्ग भूपपवतादिवर्णनानां समुचितः सन्निवेशः परमांशोभामावहति। मध्ये मध्ये समागतानि मन्दाकिनी–मध्यगतानि तीर्थानीव सुभाषितानि हारलतामध्यसन्निवेशित– रत्नानीव सर्वथानवद्यां रमणीयतां सुषमां विकासयन्ति। अतः सत्यमेवोक्तम् समालोचकैः– 'भारवेरर्थगौरवम्' इति। ○○

---

❝ ■ **मद मनुष्य की वो स्थिति या दिशा है, जिसमें वह अपने मूल कर्त्तव्य से भटक कर विनाश की ओर चला जाता है।**

■ **संस्कार ही मानव के आचरण का नींव होता है, जितने गहरे संस्कार होते हैं, उतना ही अडिग मनुष्य अपने कर्त्तव्य पर, अपने धर्म पर, सत्य पर और 'न्याय' पर होता है।** ❞

# पं. रामचन्द्र देहलवी शास्त्रार्थ महारथी

स्मृति : 3 फरवरी
शत्-शत् नमन

**आर्य समाज** के विद्वान पंडित रामचन्द्र देहलवी पुरानी दिल्ली के फव्वारे पर खुलेआम विद्वानों से शास्त्रार्थ किया करते थे। हमारे दुर्भाग्य से या सौभाग्य से भारत में कई मतावलम्बी हैं। उनमें मुख्य रूप से ईसाई, मुसलमान, आर्यसमाजी व सनातनधर्मी हैं। बाकी और जो हैं उनकी इतनी मुख्यता नहीं है। मुसलमानों का, खुदा की इबादत करने का अपना एक तरीका है। ईसाइयों व मुसलमानों में कोई विशेष भेद नहीं है, थोड़ा ही भेद है इसलिए मैं उन्हें मुसलमानों से जुदा नहीं करता हूं। सनातन धर्म और आर्यसमाज में भी कोई फर्क नहीं है। हम चाहते हैं कि जो थोड़ा सा भेद उनमें और हममें है वह न रहे। आर्य जगत में पंडित रामचंद्र जी देहलवी गजब के तार्किक थे, सभी मजहब के लोगों के साथ शास्त्रार्थ किये और सभी को अपने तार्किक शक्ति से पछाड़ा- एक शास्त्रार्थ में मौलाना सनाउल्ला ने कहा-पंडित जी जहां से आपके राम खत्म होते हैं, वहीं से हमारे मुहम्मद साहब शुरू होते हैं इसलिए अब आप को राम का नाम छोड़कर मुहम्मद का जाप करना चाहिए। देहलवी जी बोले- शाबास मौलाना साहब शाबास! मरहबा!! किन्तु मौलाना साहब आप बीच में ही क्यों रुक गए- आगे भी कहो। मौलाना बोले-आगे क्या है यह आप ही कह दीजिए। पंडित जी बोले- जहां आपके मोहम्मद साहब समाप्त होते हैं, वहीं से दयानंद शुरू हो जाते हैं, इसलिए मुहम्मद साहब को छोड़ कर दयानंद के गीत गाओ। आर्य समाज को पुनः शास्त्रार्थ आरंभ करना होगा।

# स्वामी श्रद्धानन्द

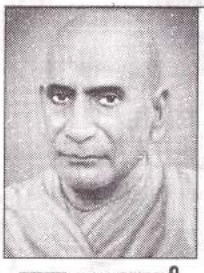

जन्म : 13 फरवरी
शत्-शत् नमन

**स्वामी** श्रद्धानन्द का जन्म पंजाब प्रांत के जालंधर जिले के तलवान ग्राम में एक कायस्थ परिवार में हुआ था। उनके पिता, लाला नानक चंद, ईस्ट इंडिया कंपनी द्वारा शासित यूनाइटेड प्रोविंस में पुलिस अधिकारी थे। उनके बचपन का नाम वृहस्पति और मुंशीराम था, किंतु मुंशीराम सरल होने के कारण अधिक प्रचलित हुआ। पिता का ट्रांसफर अलग-अलग स्थानों पर होने के कारण उनकी आरम्भिक शिक्षा अच्छी प्रकार नहीं हो सकी। लाहौर और जालंधर उनके मुख्य कार्यस्थल रहे। एक बार आर्य समाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द सरस्वती वैदिक-धर्म के प्रचारार्थ बरेली पहुंचे। पुलिस अधिकारी नानकचंद अपने पुत्र मुंशीराम को साथ लेकर स्वामी दयानन्द का प्रवचन सुनने पहुंचे। युवावस्था तक मुंशीराम ईश्वर के अस्तित्व में विश्वास नहीं करते थे। लेकिन स्वामी दयानन्द जी के तर्कों और आशीर्वाद ने मुंशीराम को दृढ़ ईश्वर विश्वासी तथा वैदिक धर्म का अनन्य भक्त बना दिया। आर्य समाज में वे बहुत ही सक्रिय रहते। वह गुरुकुल कांगड़ी व अन्य कई गुरुकुलों के संस्थापक थे। वे शुद्धि आंदोलन के प्रणेता थे। 23 दिसम्बर को उन पर मधान्ध द्वारा वार कर दिया गया जिससे वह शहीद हो गए। स्वामी जी की याद में भव्य रैली 25 दिसम्बर को निकाली जाती है।

# पं. चमूपति एम.ए.

जन्म : 15 फरवरी
शत्-शत् नमन

पंडित चमूपति का जन्म 15 फरवरी, 1863 ई. में बहावलपुर (अब पाकिस्तान) में हुआ था। इनके पिता का नाम मेहता बसंदा राम था। बालक का नाम उन्होंने चम्पतराय रखा था। पं. चमूपति जी ने मिडिल परीक्षा में अपनी रियासत में सर्वप्रथम स्थान प्राप्त किया था। मैट्रिक की परीक्षा पास करके वे बहावलपुर के सादिक ईजर्टन कॉलेज में प्रविष्ट हो गए। कॉलेज में उन्होंने उर्दू काव्य लिखना आरम्भ कर दिया। सर्वप्रथम उन्होंने सिखों के धर्मग्रंथ 'जपजी' का उर्दू में काव्यानुवाद किया। एमए की परीक्षा उत्तीर्ण कर लेने पर आप उसी रियासत के एक मिडिल स्कूल में अध्यापक नियुक्त हो गये। मेहता चम्पतराय के विचारों में (एमए) करने के उपरांत भी स्थिरता नहीं आ पाई थी। प्रारंभ में वे सिख धर्म की ओर आकृष्ट हुए तो फिर शनैः शनैः नास्तिक बन गये। इसी बीच उन्हें स्वामी दयानंद के ग्रंथों के अध्ययन का सुयोग सुलभ हुआ। परिणाम स्वरूप ईश्वर के प्रति उनकी आस्था तो जम गई किंतु वे शंकर वेदांत की ओर झुकने लगे। 15 जून 1939 को उनका स्वर्गवास हो गया। पंडित जी ने अनेक ग्रंथों का प्रणयन किया। पं. चमूपति असाधारण कोटि के विद्वान थे। हिंदू, उर्दू, और अंग्रेजी इन तीनों विषयों पर उनका समान अधिकार था।

# रक्त साक्षी पं. लेखराम

जयंती : 17 फरवरी
शत्-शत् नमन

**आर्य** मुसाफिर पं. लेखराम का जन्म 8 चैत्र, संवत् 1915 (1858 ई.) को झेलम जिला के तहसील चकवाल के सैदपुर गांव (अब पाकिस्तान में) में हुआ था। उनके पिता का नाम तारा सिंह एवं माता का नाम भाग भरी था। उन्होंने आरंभ में उर्दू-फारसी पढ़ी। बचपन से ही स्वाभिमानी और दृढ विचारों के थे। एक बार उनको पाठशाला में प्यास लगी, मौलवी से घर जाकर पानी पीने की इजाजत मांगी। मौलवी ने जूठे मटके से पानी पीने को कहां। उसने न दोबारा मौलवी से घर जाने की इजाजत मांगी और न ही जूठा पानी पिया। सारा दिन प्यासा ही बिता दिया। मुंशी कन्हैयालाल अलाख्धारी की पुस्तकों से उनको स्वामी दयानंद सरस्वती का पता चला। लेखराम जी ने ऋषि दयानंद के सभी ग्रंथों का स्वाध्याय आरंभ कर दिया। सत्रह वर्ष की उम्र में वे सन् 1875 में पेशावर पुलिस में भरती हुए और उन्नति करके सारजेंट बन गए। इन दिनों इन पर 'गीता' का बड़ा प्रभाव था। स्वामी दयानंद सरस्वती से प्रभावित होकर उन्होंने 1937 में पेशावर में आर्यसमाज की स्थापना की। 17 मई सन् 1880 को उन्होंने अजमेर में स्वामी जी से भेंट की। लेखराम जी ने सन् 1884 में पुलिस की नौकरी से त्यागपत्र दे दिया। अब उनका सारा समय वैदिक धर्मप्रचार में लगने लगा। स्वामी पर उन द्वारा लिखा जीवनवृत्त पढ़ने योग्य है। लेखन के दौरान उन पर वार किया गया था जिससे उनका प्राणांत हो गया। उनका कहना था आर्यसमाज से तहरीर और तकरीर का कार्य बंद नहीं होना चाहिए।

# वीर सावरकर

स्मृति : 26 फरवरी
शत्-शत् नमन

**वीर सावरकर** का जन्म भारत के महाराष्ट्र राज्य के नाशिक जिले के भांगुर गांव में हुआ था इनके पिता का नाम दामोदर पंत सावरकर और माता का नाम राधाबाई था जब वीर सावरकर महज 9 साल के ही थे तो इनकी माता का हैजे की बीमारी से देहांत हो गया था और फिर माता की मृत्यु के पश्चात 7 साल बाद प्लेग जैसी भयंकर बीमारी के फैलने के कारण इनके पिता भी इस दुनिया को छोड़कर चले गये। इनका लालन पालन इनके बड़े भाई गणेश और नारायण दामोदर सावरकर तथा बहन नैनाबाई की देखरेख में हुआ। बचपन से वीर सावरकर पढ़ने-लिखने में तेज थे जिसके चलते आर्थिक तंगी के बावजूद इनके भाई ने इन्हें पढ़ने के लिए स्कूल भेजा। 1901 में वीर सावरकर ने शिवाजी हाईस्कूल से नासिक से मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण की। बचपन से ही लिखने का शौक रखने वाले वीर सावरकर ने अपने पढ़ाई के दौरान कविताएं भी लिखना शुरू कर दिया था। इनका विवाह 1901 में ही यमुनाबाई के साथ हुआ जिसके बाद इनके आगे की पढ़ाई का खर्च की जिम्मेदारी इनके ससुर ने उठाया। वीर सावरकर ने पहली बार 1905 में दशहरा के दिन विदेशी कपड़ों की होली चलायी जो की एक तरह से पूरे देश में अंग्रेजी वस्तुओं के विरोध की आग पूरे देश में फैल गयी। अंग्रेजी साम्राज्य के खिलाफ भारत को आजाद कराने के लिए उन्हें अंडमान (कालापानी) में घोर यातनाएं झेलनी पड़ी, परंतु वह अपने पथ से कभी विचलित नहीं हुए।

# क्रांतिकारी योद्धा चंद्रशेखर आजाद

बलिदान : 27 फरवरी
शत्-शत् नमन

क्रांतिकारी चंद्रशेखर आजाद का जन्म 23 जुलाई 1906 को उन्नाव, उत्तर प्रदेश में हुआ था। आजाद का वास्तविक नाम चन्द्रशेखर सीताराम तिवारी था। इनका निधन 1931 में फरवरी के अंतिम सप्ताह में हुआ! जब आजाद गणेश शंकर विद्यार्थी से मिलने सीतापुर जेल गए तो विद्यार्थी ने उन्हें इलाहाबाद जाकर जवाहर लाल नेहरू से मिलने को कहा, चंद्रशेखर आजाद जब नेहरू से सरदार भगत सिंह की फांसी रुकवाने के लिए मिलने आनंद भवन गए तो उन्होंने चंद्रशेखर की बात सुनने से भी इन्कार कर दिया। गुस्से में वहां से निकल-कर चंद्रशेखर आजाद अपने साथी सुखदेव राज के साथ एल्फ्रेड पार्क चले गये। वे सुखदेव के साथ आगामी योजनाओं के विषय में बात ही कर रहे थे कि पुलिस ने उन्हें घेर लिया, अपने बचाव में उन्होंने अपनी जेब से पिस्तौल निकालकर गोलियां दागनी शुरू कर दी। दोनों ओर से गोलीबारी हुई। जब चंद्रशेखर के पास मात्र एक ही गोली रह गई तो उन्हें सामना करना मुश्किल लगा। आजाद ने पहले ही प्रण किया था कि वह कभी भी जिंदा पुलिस के हाथ नहीं आएंगे। इसी प्रण को निभाते हुए उन्होंने वह बची हुई गोली खुद को मार ली। जिस पार्क में उनका निधन हुआ था उसका नाम परिवर्तित कर 'चंद्रशेखर आजाद पार्क' और मध्य प्रदेश में जिस गांव में वह रहे थे उसका धिमारपुर नाम बदलकर आजादपुरा रखा गया।

# वैचारिक गोष्ठी : गुरु, झूठेगुरु, सद्गुरु व परमगुरु

**डॉ. विनय विद्यालंकार**
प्रधान, आर्य प्रतिनिधि सभा, उत्तराखंड

**विचारणीय बिन्दु :** गुरु की आवश्यकता, गुरु का वैदिक स्वरूप अर्थात् सद्गुरु, गुरु का विकृत स्वरूप अर्थात्-झूठे गुरु, परमगुरु अर्थात् परमात्मा। यह स्थापित एवं निर्विवाद सत्य है कि मनुष्य संसार का ऐसा प्राणी है जो बिना सिखाए कुछ भी नहीं सीखता, यहां तक कि चलना, बोलना, पढ़ना, लिखना, व्यवहार करना सभी कुछ कहीं न कहीं से सीखता ही है। यदि मनुष्य के बच्चे को मानव समाज से पृथक पशु-पक्षियों के मध्य रख दिया जाय तो वह मनुष्योचित क्रियाओं के स्थानपर उन्हीं इतर प्राणियों के जैसा आचरण करेगा। संसार में ज्ञान के दो भेद (दृष्टिगत) होते हैं- स्वाभाविक ज्ञान व नैमित्तिक ज्ञान, मनुष्य के इतर प्राणीजगत् जन्म के साथ ही स्व-स्व योनि का स्वाभाविक ज्ञान लेकर उत्पन्न होता है और उसी ज्ञान से सम्पूर्ण जीवन क्रियाओं का संचालन कर लेता है। मनुष्य ऐसा प्राणी है जिसे क्रिया, व्यवहार व ज्ञान हेतु एक ज्ञानदाता की आवश्यकता होती है जिसे 'गुरु' कहा गया है। मनुष्य की प्रथम गुरु मां ही होती है। यह भी निर्विवाद है कि मनुष्य के सर्वांगीण विकास हेतु अनुभवी, बहु अधीत, शास्त्रवेत्ता, विविध विद्या निष्णात, शास्त्र एवं लोक दोनों के ज्ञाता गुरुओं की आवश्यकता होती है। वैदिक शिक्षा व्यवस्था में पदे-पदे गुरु-शिष्य परम्परा के आख्यान प्राप्त होते हैं। शिक्षा स्थल को भी 'गुरुकुल' नाम दिया गया। षोडश संस्कारों में उपनयन एवं वेदारम्भ संस्कार भी गुरु के सान्निध्य में ही सम्पन्न कराये जाते हैं।

**गुरु का वैदिक स्वरूप-सद्गुरु :** वेदों में अनेक संवाद हैं जिनमें एक प्रश्नकर्ता अर्थात् जिज्ञासु शिष्य है तो दूसरी ओर समाधाता गुरु- 'कस्त्वा युनक्ति? सत्वा युनक्ति। क: स्विद् एकाकी चरित? सूर्यो एकाकी चरति' आदि अनेक प्रश्नोत्तर क्रम वेदों में उपलब्ध है। उपनिषद् साहित्य में प्राय: शिष्य द्वारा प्रश्न करना गुरु (ऋषि) द्वारा उत्तर देने के आख्यान हैं। कठोपनिषद् यम नचिकेता संवाद पर ही आधारित है। प्रश्नोपनिषद् भी इसी प्रश्नोत्तर क्रम से है। छान्दोग्योपनिषद् के ब्रह्मज्ञान विषयक समस्त संवाद गुरु शिष्य की वैदिक परम्परा का उत्कृष्ट उदाहरण है। महर्षि दयानन्द जी के जीवन का अध्ययन करते हैं तो ज्ञात होता है कि घर छोड़ने के बाद एक दीर्घाविधि गुरु की खोज में ही व्यतीत हुई गुजरात से लेकर गंगोत्री तक अनेक पौराणिक संन्यासी, विद्वान, उपदेशक मिले परंतु सच्चा गुरु नहीं मिला। लोग भ्रम में डालने वाली शिक्षाएं प्रदान करते थे जबकि वह दिव्यात्मा, ऋषि आत्मा गुरुओं का परीक्षण करता हुआ आगे बढ़ता रहा और यह अभिलाषा दंडी गुरु विरजानंद जी की कुटिया पर जाकर पूर्ण हुई। अनेक वर्ष तक अनेक अनार्ष विद्वानों से जो अध्ययन किया था वह न तो जिज्ञासा शांत कर पाया और न ही आत्मोन्नति तक पहुंचा पाया। किंतु जब आर्ष विद्या निष्णात ईश्वरीय ज्ञान से सीधा सम्पर्क रखने वाले सद्गुरु गुरुवर विरजानंद दंडी जी ने केवल तीन वर्ष में ही ऐसी दृष्टि प्रदान की कि वह ज्ञान पिपासु, जिज्ञासु दयानन्द वेदोद्धारक महर्षि दयान्द सरस्वती बनकर उस कुटिया से निकले। शिक्षा के लिए किये जाने वाले संस्कार का नाम 'उपनयन' इसलिए होता है क्योंकि आचार्य शिष्यकी दृष्टि को स्पष्ट करता है एवं विज़न क्लीयर करता है और वह कार्य आर्ष दृष्टि वाला आचार्य गुरु ही कर सकता है। जो दृष्टि ऋषिवर ने गुरुवर दंडी से प्राप्त की उसका इतना बृहद् विस्तार होगा किसी ने कल्पना नहीं की थी कि आज नासा जैसे वैज्ञानिक संस्थान वेद को प्रासंगिक मानने को विवश हैं अन्यथा वेद केवल यज्ञ कर्मकाण्ड तक सीमित हो चुके थे। गुरुदत्त विद्यार्थी जैसे विज्ञान वेत्ता ने ऋषि ग्रंथ पढ़कर अपनी दृष्टि स्पष्ट की और अनेक लेखों व पुस्तकों द्वारा वैदिक एवं ऋषि ज्ञान को विज्ञान की कसौटी पर सत्य सिद्ध किया।

ऋषि दयानन्द जी ने ऋग्वेद भाष्य के प्रथम मंडल के 119वें सूक्त के आठवें मंत्र के भाष्य में उपदेष्टा गुरु की विशेषताएं लिखीं हैं- 'सब मनुष्य पूरी विद्या जानने और शास्त्र सिद्धांत में रमने वाले द्वेष और पक्षपात रहित सबके ऊपर कृपा करते, सर्वथा सत्ययुक्त, असत्य को छोड़े, इन्द्रियों की जीते और योग सिद्धांत को पाये हुए, अगले पिछले व्यवहार को जानने वाले, जीवन मुक्त, संन्यास के आश्रम में स्थित संसार में उपदेश करने के लिए नित्य भ्रमते हुए वेद विद्या के जानने वाले संन्यासी जन को पाकर धर्म अर्थ काम और मोक्ष की सिद्धियों को विधान के साथ पावें। ऐसे संन्यासी आदि के बिना कोई भी मनुष्य पदार्थ बोध नहीं पा सकता।' इसी क्रम में ऋग्वेद 1-120-4 के भाष्य में ऋषिवर ने लिखा 'विद्वांसो नित्यमाबालवृद्धान् प्रति सिद्धांत विद्या उपदिशेयुर्यतस्तेषां रक्षोन्नति स्याताम्।' विद्वान जन नित्य बालक आदि से लेकर वृद्ध पर्यन्त मनुष्यों को सिद्धांत विद्याओं का उफदेश करें जिससे उनकी रक्षा और उन्नति होवे।

➲➲

# मनुष्य बन (मनुर्भव)

प्रो. डॉ. सुंदरलाल कथूरिया
पूर्व प्रो. भावनगर, विवि गुजरात

मनुष्य को संसार का श्रेष्ठतम और सुंदरतम प्राणी माना गया है। मनुष्य की श्रेष्ठता-सुंदरता का आधार है उसकी सद्बुद्धि, उसके विवेकाश्रित कर्म। मनुष्य और पशुओं में व्यावर्तक गुण 'धर्म' है, कर्त्तव्यनिष्ठा है, अन्यथा मनुष्य और पशुओं में कोई अंतर नहीं। आहार, नींद, भय, मैथुन, क्रोध, वात्सल्य आदि विषय-विकार तो मनुष्यों में भी हैं और पशुओं में भी पर मनुष्य की विशेषता 'धर्म' में, कर्त्तव्य-चेतना में, मानव-मूल्यों में, ज्ञान और आचरण में है।

मनुष्य के सहस्रों वर्षों की अजस्र साधना से साहित्य, संगीत, कला आदि के क्षेत्र में जो प्रगति हुई है, सामाजिकता, सभ्यता और संस्कृति के जिन उत्तुंग शिखरों को छुआ है, मानव-मूल्यों, मानवीय भावनाओं, सद्गुणों, धर्माध्यात्म आदि के जिन महनीय भावों को स्वीकारा है, उन्हीं से उसकी पहचान बनती है- इन्हीं से मनुष्य सच्चे अर्थों में मनुष्य बनता है और इन गुणों की पराकाष्ठा पर पहुंच कर देव-स्थान का अधिकारी हो जाता है, अवतारी बन जाता है, देश-काल की सीमाओं को भेदकर अजर-अमर हो जाता है, अभिनंदनीय और पूज्य हो जाता है।

इस प्रस्थान के मूल में है मनुष्य और मानवीय गुण- और इसीलिए साहित्य का सारा प्रयत्न मनुष्य को सच्चे अर्थों में मनुष्य बनाने का है, उसका लक्ष्य मनुष्य है, उसके केंद्र में मनुष्य है, मानवीय गुण और मानव-मूल्य है, प्राणिमात्र का हित-साधन है, शिव-संकल्प है, सत्य और न्याय की प्रतिष्ठा है और अन्याय, अनाचार, असत्य, अशिव, असुंदर आदि के पुरजोर विरोध की भावना। जिस साहित्य में यह नहीं है वह मनुष्य के किसी काम का नहीं है। तुलसीदास ने ठीक ही लिखा है, 'कीरति भनिति भूति भल सोई। सुरसरि सम सब कह हित होई।' साहित्य को 'सत्यं शिवं सुंदरम्' का साधक होना चाहिए। उसके द्वारा निर्बलों, शोषितों, दीन-दुखियों, दलितों, पीड़ितों को भी बल मिलना चाहिए, उनका भी भला होना चाहिए। आज हम जिस साहित्य की सृष्टि कर रहे हैं, क्या वह इस लक्ष्य की सिद्धि में सहायक है? क्या यह निराशा के घनघोर घटाओं के अंधकार में प्रकाश की किरणें विकीर्ण कर रहा है और क्या मनुष्य को सच्चे अर्थों में मनुष्य बनने की प्रेरणा दे रहा है? यदि 'हां' तो ठीक, अन्यथा हमारे कागज रंगने का कोई अर्थ नहीं।

शक्ल-सूरत और आकार-प्रकार से तो सभी मनुष्य दिखते हैं, किंतु वास्तव में सब 'मनुष्य' होते नहीं। अनेक मनुष्य हिंसक पशुओं से भी अधिक हिंसक और दानवों से भी अधिक दुर्दांत होते हैं। तब उन्हें मनुष्य कैसे कहा जाय? वस्तुत: ऐसे मनुष्य मानवता के नाम पर कलंक हैं। यों तो ऐसे मनुष्य कमोबेश संख्या में हर युग में रहे हैं, पर इस कलिकाल में इनकी संख्या में बेतहाशा वृद्धि हुई है। आज दानवता का जो तांडव नृत्य हो रहा है, वैसा संभवत: इससे पहले कभी नहीं हुआ। हिंसा, उग्रता, आतंक, परपीड़न आदि आज अपने चरम पर हैं। मानवता कराह रही है और दानवता सिर उठाकर चल रही है- सर्वत्र उसी का बोलबाला है। इस देश के मंत्र द्रष्टा ऋषि यह जानते थे कि मनुष्य के भीतर की पाशविक प्रवृत्तियां मानवीय प्रवृत्तियों से कहीं अधिक सबल हैं और यह भी है कि परपीड़न में उसे अधिक आनंद आता है, अत: उन ऋषियों ने आज से सहस्रों वर्ष पहले वेद में मनुष्य को मनुष्य बनने की शिक्षा दी, कहा कि 'मनुर्भव' अर्थात् 'हे मनुष्य! तू मनुष्य बन।' उन मंत्र द्रष्ट ऋषियों के मनमें यह आशंका थी कि मनुष्य और चाहे जो बन जाए, उसके लिए मनुष्य बनना सबसे कठिन है, हालांकि यही उसके लिए सबसे जरूरी है, अत: उन्हें कहना पड़ा- 'मनुर्भव'।

वेद में प्रश्न भी उठाया गया है कि 'तू कौन है?'-कोऽसि। और यदि इस प्रश्न का उत्तर यह है कि मैं मनुष्य हूं, आत्म-स्वरूप हूं, उसी परमात्मा का एक अंश हूं, मरणधर्मा शरीर नहीं, चेतना हूं तो हमें उसी परमपिता परमात्मा के गुणों को धारण करते हुए स्वयं को शुद्ध-बुद्ध, न्यायकारी, पक्षपातरहित, परोपकारी , दीनबंधु, सर्वहितकारी, सर्वगुण सम्पन्न बनाने की चेष्टा करनी चाहिए, तभी हम सच्चे अर्थों में 'मनुष्य' पद के अधिकारी हो सकते हैं, उस परमपिता के सपूत कहला सकते हैं। किंतु आज स्थिति इसके विपरीत है, मनुष्य मनुष्यता का परित्याग कर पूरी तरह हैवान बन चुका है, पशु बन चुका है और वह पशु बल के सहारे मरणधर्मा शरीर के लिए सभी प्रकार की सुख-सुविधाएं जुटा लेना चाहता है। ○○

# The Myth of the Aryan Invasion of India

## Article By David Frawley

(Conti. old education)

Meanwhile, it was also pointed out that in the middle of the second millennium apparently occurred in the Middle East, wherein Indo-European peoples-the Hittites, Mittani and Kassites-conquered and ruled Mesopotamia for some centuries. An Aryan invasion of India would have been another version of this same movement of Indo-European peoples. On top of this, excavators of the Indus Valley culture, like Wheeler, thought they found evidence of destruction of the culture by an outside invasion confirming this.

The Vedic culture was thus said to be that of primitive nomads who came out of Central Asia with their horse-drawn chariots and iron weapons and overthrew the cities of the more advanced Indus Valley culture, with their superior battle tactics. It was pointed out that no horses, chariots or iron were discovered in Indus Valley sites.

This was how the Aryan invasion theory formed and has remained since then. Though little has been discovered that confirms this theory, there has been much hesitancy to question it, much less to give t up. Further excavations discovered horses not only in the Indus Valley sites but also in pre-Indus sites. The use of the horse has thus been proven for the whole range of ancient Indian history. Evidence of the wheel, and an Indus seal showing a spoked wheel as used in chariots, has also been found, suggesting the usage of chariots. Moreover, the whole idea of nomads with chariots has been challenged. Chariots are not vehicles of nomads. Their usage occurred only in ancient urban cultures with much flat land, of which the river plain of north India was the most suitable. Chariots are totally unsuitable for crossing mountains and deserts, as the so-called Aryan invasion required. That the Vedic culture used iron-and must hence date later than the introduction of iron around 1500 BC-revolves around the meaning of the Vedic term "ayas", interpreted as iron. Ayas in the Indo-European languages like Latin or German usually means copper, bronze or ore generally, not specially iron. There is no reason to insist that in such earlier Vedic times, ayas meant iron, particularly since other metals are not mentioned in the Rig Veda (except gold that is much more commonly referred to than ayas) Moreover, the Atharva Veda and Yajur Veda speak of different colours of ayas (such as red and black), showing that it was a generic term. Hence it is clear that ayas generally meant metal and not specifically iron.

Moreover, the enemies of the Vedic people in the Rig Veda also use ayas, even for making their cities, as do the Vedic people themselves. Hence there is nothing in Vedic literature to show that either the Vedic vulture was an iron based culture or that their enemies were not. The Rig Veda describes its gods as "destroyers of cities". This was used also to regard the Vedic as a primitive non-urban culture that destroys cities and urban civilization. However, there are also many verses in the Rig Veda that speak of the Aryans as having cities of their own and being protected by cities up to a Hundred in Number.

(Conti. to next education)

# ऋषि दयानन्द का सत्संग : स्वामी श्रद्धानंद की डायरी से

**स्व. महात्मा गोपाल स्वामी सरस्वती**

स्वामी दयानन्द जी महाराज बरेली नगर में 14 अगस्त 1879 ईस्वी को पधारे, उन दिनों मेरे पिता उस स्थान के शहर कोतवाल में थे। स्वामी जी महाराज के पहुंचते ही कोतवाल साहब को हुक्म मिला कि पंडित दयानन्द सरस्वती के व्याख्यानों के अंदर फ़िसाद आदि को रोकने का बंदोबस्त करें। मैं इन दिनों काशी में विशूचिका रोग फैलने के कारण और कॉलेज के विशेष छुट्टियां हो जाने के कारण बरेली आया हुआ था। मैं उन दिनों नास्तिक था। काशी की प्रबल मूर्ति पूजा से व्याकुल होकर मतमतांतरों में कुछ समय आंदोलन करने के पश्चात् ईश्वर की सत्ता को ही अस्वीकार कर दिया था।

ईश्वरीय ज्ञान का न तो कभी मानने वाला था और न ही इञ्जील और कुरान से मुझे कभी शांति प्राप्त हुई। वेद का नाम सुना ही न था। नास्तिक होने के अतिरिक्त मेरा यह दृढ़ मत था कि संस्कृत भाषा में मूर्खतापन के अतिरिक्त बुद्धि की कोई बात है ही नहीं।

यही कारण था कि काशी में पांच तक निवास रखने और पंडितों के हठ करने पर भी मैंने लघुकौमुदी का कुछ प्रारंभिक भाग ही पढ़ा और कुछ संस्कृत काव्य के अध्ययन के अतिरिक्त संस्कृत भाषा की ओर कुछ विशेष ध्यान न दिया था।

मेरे पिता पौराणिक धर्म पर पक्का विश्वास रखने वाले और प्रतिदिन तीन घंटों की पूजा करने वाले थे। पुलिस विभाग में वह असाधारण व्यक्ति समझे जाते थे, क्योंकि पूजा और पुलिस का कोई संबंध न था। स्वामी दयानन्द का पहला भाषण सुनकर आते ही पिता ने मुझसे कहा- 'बेटा मुंशीराम! एक दंडी संन्यासी आये हैं, बड़े विद्वान और योगिराज हैं। तुम्हारे संशय उनकी वक्तृता सुन के निवृत हो जायेंगे, कल मेरे साथ चलना।' मेरे पिता को विदित था कि मैं नास्तिक हूं, क्योंकि अपने विचारों को छिपाने की योग्यता मुझमें पहले से न थी। उत्तर में मैंने प्रतिज्ञा की, कि चलूंगा। परंतु और कुछ न कहा क्योंकि मन में उसी समय विचार आया कि संस्कृत जानने वाला साधु बुद्धि की क्या बात करेगा। दूसरे दिन खजांची लक्ष्मीनारायण की कोठी बेगम बाग में पिता जी के साथ पहुंचा, जहां व्याख्यान हो रहा था।

उस दिव्य आदित्य मूर्ति को देखकर कुछ श्रद्धा उत्पन्न हुई, परंतु जब पादरी टीजे स्कॉट और दो-तीन अन्य यूरोपियनों को उत्सुकता से बैठे देखा तो श्रद्धा और भी बढ़ी। अभी दस मिनट वक्तृता नहीं सुनी थी कि मन में विचार किया- 'यह विचित्र व्यक्ति है कि केवल संस्कृतज्ञ होते हुए युक्तियुक्त बातें करता है कि विद्वान दंग हो जाएं। व्याख्यान परमात्मा के निज नाम 'ओ३म्' पर था। वह पहले दिन का आत्मिक आह्लाद कभी भूल नहीं सकता। नास्तिक रहते हुए भी आत्मिक आह्लाद में निमग्न कर देना ऋषि-आत्मा का ही काम था। उसी दिन दंडी स्वामी से निवेदन किया गया कि (कुतुबखाने) पर टाउन हॉल मिल गया है इसलिए कल से व्याख्यान वहां शुरू होंगे। स्वामी जी ने उच्च स्वर से कह दिया कि सवारी समय पर पहुंच जाया करेगी तो वह तैयार मिलेंगे।

टाउन हॉल में जब तक 'नमस्ते, पोप, पुराणी, जैनी, किरानी, कुरानी इत्यादि परभाषाओं का अर्थ बतलाते रहे तब तक तो पिता जी श्रद्धा से सुनते रहे, परंतु जब मूर्ति-पूजा और ईश्वरावतार का खंडन होने लगा तो जहां एक ओर मेरी श्रद्धा बढ़ने लगी, वहां पिता जी ने तो आना बंद कर दिया और एक अपने मातहत थानेदार की ड्यूटी लगा दी।'

24 अगस्त की शाम तक मेरा समय-विभाग यह रहा कि दिन का भोजन करके दोपहर को बेगम बाग की कोठी पहुंच ड्योढ़ी पर बैठ जाता। ढाई से चार बजे के बीच में जब ऋषि का दरबार लगता तो आज्ञा होते ही जो पहला मनुष्य आचार्य ऋषि को प्रणाम करता, वह मैं था। प्रश्नोत्तर होते रहते और मैं उनका आनंद लेता रहता।

व्याख्यान के बाद बीस मिनट तक सब दरबारी विदा हो जाते और आचार्य चलने की तैयारी कर लेते। मैं अपनी वेगनट से सीधा टाउन हॉल पहुंचाता। व्याख्यान का आनंद उठाकर उस समय तक घर न लौटता, जब तक कि आचार्य दयानन्द की बग्घी उनके डेरे की ओर न चल देती। ➲➲

■ नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः। न चैनं क्लेदयन्त्यापो न च शोषयति मारुतः॥ - गीता 2/23

# चमत्कार कुछ नहीं केवल छलावा है

**सुरेंद्र कुमार रैली**
अध्यक्ष, पाखंड और अंधविश्वास उन्मूलन समिति, दिल्ली

इस देश में ऐसे मूर्खों की कमी नहीं है जो चमत्कारों में विश्वास रखते हैं। विशेषकर उन चमत्कारों में जिसको साधारण बुद्धि भी मानने से इंकार कर दे। आजकल कम पढ़ा-लिखा व्यक्ति भले इन बेतुके पाखंड भरे चमत्कारों को नकार दें, लेकिन पढ़े-लिखे, बड़े-बड़े नौकरशाह, नामी गिरामी धनपति एवं दिग्गज राजनैतिक नेता तक इन अंधविश्वासों के मोहपाश में जकड़े हुए हैं। नि:संदेह यह लोग ही पाखंड, आडंबर, अंधविश्वास और अवैज्ञानिक चमत्कारों को संरक्षण देते हैं जो पूरे समाज व देश को अविवेक की ओर धकेलता है। जब गणेश की मूर्ति को दूध पिलाने का पाखंड किया जा रहा था, उस समय यह लोग बढ़-चढ़कर इसे प्रचारित व प्रसारित कर रहे थे। चंद्रमा की धरती पर आदमी का उतरना या मंगल ग्रह से वहां के चित्र लाना, जेब में रखे एक छोटे से टेलीफोन के यंत्र के माध्यम से दुनिया भर में सीधे लाइव चित्रों सहित बातकर सकना या फिर टेलिविजन के माध्यम से हजारों मील दूर पर घटनाओं का सीधा प्रसारण तुरंत उसी वक्त देखना, इंटरनेट, फेसबुक, वाट्सअप, ई-मेल इत्यादि इन्हें चमत्कार नहीं लगता लेकिन पत्थर की मूर्ति द्वारा दूध पीना इन्हें आश्चर्यचकित कर रहा था जबकि यह खुलेआम पाखंड हो रहा था और मूर्ति दूध नहीं पी रही थी। लेकिन फिर भी यह लोगों के मन में बुद्धि-भ्रम पैदा कर रहे थे जैसे एक जादूगर करता है। इन षड्यंत्रकारियों का केवल एक ही उद्देश्य था कि आम आदमी मूर्ति पूजा में विश्वास करे और मंदिरों को दान दे ताकि वह भव्य बने और 21वीं सदी में कोई नया महमूद गजनवी इनको लूटने के लिए लालायित हो।

वैसे जिन्होंने दूध पिला दिया, उन्हें क्या मिला और जिन्होंने दूध नहीं पिलाया उन्होंने क्या खोया। बस इतना हुआ कि मंदिरों के पुजारियों को खूब चढ़ावा मिला, मंदिरों में जाने वालों की संख्या बढ़ गई और दूध बेचने वालों ने कच्ची लस्सी दूध के भाव बेचकर पैसा कमाया। लेकिन नुकसान कितना हुआ, उसका अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि न केवल बच्चों के मुख से लाखों टन दूध छीनकर नाली में बहा दिया गया बल्कि करोड़ों दिलों में पाखंड और अंधविश्वास को जमा दिया कि मूर्ति दूध पीती है अत: वह पाषाण नहीं अपितु जिंदा है।

ईश्वर उसमें निवास करता है और उस मूर्ति की कृपा से कुछ भी पाया जा सकता है। ऐसा अंधविश्वास किसी भी समाज को कमजोर बनाता है। उसे आत्मविश्वास से वंचित करता है। उसके सोचने और विवेक की शक्ति को मंद करता है। ऐसा समाज यथार्थ पर नहीं, अनहोनी और अफवाहों को सहज ही विश्वनीय मानने लगता है। यह स्थिति हिंदू समाज के लिए बेहद घातक है। अगर अफवाहों की चपेट में आने की भारतीय समाज की संवेदनशीलता इतनी गहरी है तो कल को इस समाज का कोई भी शत्रु सहजता से इसका लाभ उठा सकता है। जो समाज सिर्फ अफवाह के आधार पर किसी भी समझदार शत्रु द्वारा सहज ही पराजय और पतन के गर्त में धकेल कर ध्वस्त किया जा सकता है। यानी हम अंधविश्वासों और चमत्कारों पर विश्वास करते रहें और किसी भी क्षण औंधे मुंह गिरने को तैयार रहें।

आज फिर हिंदू समाज को विवेक पूर्ण चेतना की आवश्यकता है। जो लोग पाखंड और अंधविश्वास फैला रहे हैं, वह समाज के सबसे बड़े शत्रु हैं, जिनकी पहचान होनी चाहिए और उन्हें कठोर दंड देना चाहिए। ○○

**अंधविश्वास किसी भी समाज को कमजोर बनाता है। उसे आत्मविश्वास से वंचित करता है। उसके सोचने और विवेक की शक्ति को मंद करता है। ऐसा समाज यथार्थ पर नहीं, अनहोनी और अफवाहों को सहज ही विश्वनीय मानने लगता है। यह स्थिति हिन्दू समाज के लिए बेहद घातक है। अगर अफवाहों की चपेट में आने की भारतीय समाज की संवेदनशीलता इतनी गहरी है तो कल को इस समाज का कोई भी शत्रु सहजता से इसका लाभ उठा सकता है। जो समाज सिर्फ अफवाह के आधार पर किसी भी समझदार शत्रु द्वारा सहज ही पराजय और पतन के गर्त में धकेल कर ध्वस्त किया जा सकता है। यानी हम अंधविश्वासों और चमत्कारों पर विश्वास करते रहें और किसी भी क्षण औंधे मुंह गिरने को तैयार रहें**

# ईश-प्रार्थना

सुख भी मुझे प्यारे हैं, दुःख भी मुझे प्यारे हैं।
छोड़ूं मैं किसे भगवन्, दोनों ही तुम्हारे हैं।।

सुख-दुःख ही तो जीवन की गाड़ी को चलाते हैं।
सुख-दुःख ही तो हम सबको इन्सान बनाते हैं।
संसार की नदियों के दोनों ही किनारे हैं।।

दुःख चाहे न कोई भी, सब सुख को तरसते हैं।
दुःख में सब रोते हैं, सुख में सब हंसते हैं।
सुख मिले पीछे उसके सुख ही तो सहारे हैं।।

सुख में तेरा शुक्र करूं, दुःख में फरियाद करूं।
जिस हाल में रखे मुझे, मैं तुमको याद करूं।
मैंने तो तेरे आगे, ये हाथ पसारे हैं।।

जो है तेरी रजा उसमें, देखूं मैं पकड़ कैसे।
मैं कैसे कहूं मेरे, कर्मों के हैं फल कैसे।
चख करके न देखूंगा, मीठे हैं कि खारे हैं।।

➲ नंद किशोर आर्य

# ओ३म् नाम अति प्यारा...

रोम-रोम में ओ३म् बसा है, ओ३म् नाम सुखदायी।
रक्षक-पोषक माता-पिता हैं, वही बहन और भाई।
सारे सहारे छूट जायें पर, उसका मिले सहारा।।

हर पल ओ३म् का नाम हो मुख में, यही कामना मन में।
कतरा-कतरा ओ३ममयी हो, जो भी है इस तन में।
तन-मन-धन सब ओ३म् पे अर्पण, जीवन ओ३म् पे वारा।।

नेक भावना लेकर मन में, ओ३म् नाम उच्चारो।
फंसी भंवर में पार हो नैया, सुनलो ओ३म् के प्यारों।
जग को रचता और टिकाता, वही है पालन हारा।।

ओ३म् नाम आनन्द का सागर, मैं आनन्द पिपासु।
खुशी मिलन की अपार कभी, और कभी छलकते आंसू।
'संजीव' हृदय में झाँक देख ले, ना फिर मारा-मारा।।

➲ संजीव कुमार आर्य

# कहां भाग्य की रेखा

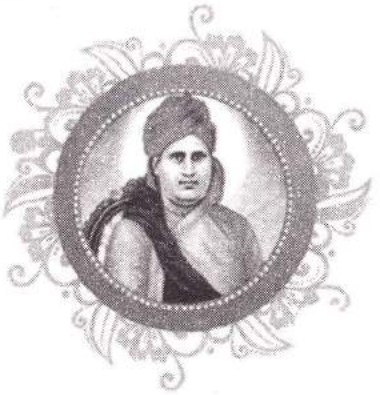

आसमां की हथेली में कहां भाग्य की रेखा
चाँद सितारों के जीवन का कहां मिलेगा लेखा।
जिसकी अंगुलियां, कलम से लिखती ये इतिहास
उस रचनाकार के हाथों को आज तक किसने देखा॥

क्या आधार है सृष्टि का और क्या है सत्य
आंखें देख रही जिसे क्या वो भी है असत्य।
समय बिन पंखों के उड़ता, करता नए-नए कृत्य
मानस पटल पर भावनाएँ करती नूतन नृत्य॥

बिजली के धागों से, कौन फटे बादलों को सिए
कौन चाँद से अमृत छलकाएँ और फिर इसे पिए।
किसने अनवरत उपहार इस जगत के लिए दिए
चुपचाप लगा हुआ जो इस संसार हित के लिए॥

एक क्षण में सिमटे हुए हैं जिसके तीनों काल
जिसकी मुट्ठी में सिमट जाए यह गगन विशाल।
करुणा का अमृत छलकाए बनकर बड़ा दयाल
जिसके संकेत से थम जाए इस सृष्टि की चाल॥

हृदय भीतर जिसका प्रकाश उसी को माथा टेका
आसमां की हथेली में कहाँ भाग्य की रेखा॥

➲ विजय गुप्त 'आशु कवि'

# सृष्टि की उत्पत्ति और इसकी व्यवस्था ईश्वर के अस्तित्व का प्रमाण है

आदित्य प्रकाश गुप्त
प्रधान, आर्यसमाज, सहारनपुर (उप्र)

जो मनुष्य भौतिक सुखों के चक्र में फंसे व बंधे हुए हैं, उनके पास ईश्वर व जीवात्मा को जानने व ईश्वर की उपासना करने के लिये समय ही नहीं है। भौतिक सुखों का भोग करने से वह ईश्वर की उपासना व यज्ञादि कर्मों के फलों से पृथक व दूर हो जाते हैं जिससे उनका भविष्य व पुनर्जन्म प्रभावित व बाधित होता है। जिन मनुष्यों ने इस जीवन में शुभकर्म व ईश्वरोपासना आदि कर्म व साधन किये हैं, उन्हीं का पुनर्जन्म मनुष्य व देवों के रूप में होना सम्भव है। भौतिकवादी मनुष्यों ने जो शुभाशुभ कर्म किये होते हैं, उसी के अनुसार उनका भावी जन्म निश्चित होता है।

अत: जीवन को श्रेष्ठ व उत्तम कोटि का बनाने के लिये मनुष्यों को ईश्वर व जीवात्मा को जानकर ईश्वरोपासना व यज्ञादि कर्मों सहित परोपकार आदि करते रहना चाहिये। यह ध्यान रखना चाहिये कि हमारा वर्तमान जीवन हमारे सम्पूर्ण भूतकाल का परिणाम है और हमारा भविष्य हमारे वर्तमान के कर्मों का परिणाम होगा। मनुष्य जीवन हर क्षण व हर पल घट रहा है। समय बीतने के बाद बीते हुए क्षण वापिस लौटाये नहीं जा सकते। अनुभव से यह सिद्ध है कि ईश्वर का ज्ञान व साधना जो युवावस्था में कर सकते हैं वह वृद्धावस्था में नहीं हो पाती। वृद्धावस्था में अधिकांश मनुष्य रोग, पारिवारिक समस्याओं व अन्य चिंताओं से ग्रस्त हो जाते हैं। फिर यदि ज्ञान भी हो जाये तो पछताना ही पड़ता है। अत: युवावस्था में ही सच्चे ज्ञानी के सम्पर्क में जा कर तर्क-वितर्क कर सत्य व असत्य को जानना चाहिये। इसका सबसे अच्छा साधना सत्यार्थप्रकाश का अध्ययन है। इसके अध्ययन व आर्यसमाज से सम्पर्क बढ़ाकर मनुष्य सत्य व प्रगति के पथ पर अग्रसर हो सकता है। जीवन को वर्तमान व भविष्य के दु:खों से मुक्त करने के लिये हमें ध्यान करने योग्य ईश्वर के स्वरूप में स्वयं को स्थित कर उसकी स्तुति, प्रार्थना व उपासना करनी चाहिये। आध्यात्मिक जीवन से मनुष्य को ईश्वरीय आनन्द और भौतिक सुख दोनो प्राप्त होते हैं। उनका भविष्य भी सुरक्षित होता है। कोरे भौतिक सुखों के भोग व ईश्वर उपासना आदि कार्यों को न करने से हमारा भविष्य बिगड़ता है। मनुष्य मननशील प्राणी है। उसे अपने जीवन की उन्नति से जुड़े सभी प्रश्नों पर विचार करना चाहिये। इसी में उसका लाभ है। ओ३म् शम्!!


## 'विद्या दान सबसे बड़ा दान है'

आर्ष गुरुकुल, बी-69, सेक्टर-33, नोएडा "आर्ष गुरुकुल शिक्षा प्रबंध समिति" द्वारा संचालित वैदिक शिक्षा का उत्कृष्ट केंद्र, आर्य समाज बी-69, सेक्टर-33, नोएडा में स्थापित पिछले 25 वर्षों से ब्रह्मचारियों को विद्वान बना रहा है। जो आर्य समाज के प्रचार-प्रसार में सहयोग कर रहे हैं। इस समय 100 ब्रह्मचारी शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं। आर्ष गुरुकुल के प्रधानाचार्य डॉ. जयेन्द्र कुमार के नेतृत्व में दिन-रात चौगुनी उन्नति की ओर अग्रसर गुरुकुल को सहयोग देकर 'विद्या दान सबसे बड़ा दान है' में सहयोगी बनें। संस्था में निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था है। कृपया उदार हृदय से आप सहयोग 'यूनाइटेड बैंक ऑफ इंडिया', नोएडा सेक्टर-33 में खाता संख्या A/C No. 1483010112345, IFSC- UTB10SCN560 में भेजकर सूचित करें ताकि आपको पावती (रसीद) भेजी जा सके। 'आर्ष गुरुकुल को दी जाने वाली राशि आयकर की धारा 80जी के अंतर्गत कर मुक्त है।' धन्यवाद!

(आर्य कै. अशोक गुलाटी)
प्रबंध संपादक, 'विश्ववारा संस्कृति', मो. : 9871798221, 7011279734

# धन्यो गृहस्थाश्रमः

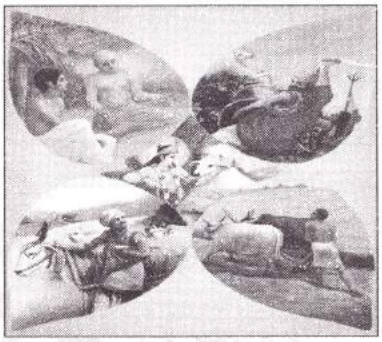

**डॉ. महेश विद्यालंकार**

**वर्णाश्रम-व्यवस्था** वैदिक संस्कृति की महत्वपूर्ण विशेषता है। वर्ण-परंपरा सामाजिक उन्नति-प्रगति का और आश्रम-व्यवस्था, व्यक्ति उत्थान एवं कल्याण का स्वस्थ आधार है। इस वैदिक व्यवस्था में व्यक्ति, परिवार, समाज तथा राष्ट्र को उन्नत होने का सम्यक अवसर मिलता है। ऐसी सुंदर, व्यवस्थित, व्यवहारिक, उपयोगी और जीवनोद्देश्य की पूर्ति में सहायक चिंतनधारा संसार की अन्य जीवन पद्धतियों में दुर्लभ है। शतपथ ब्राह्मण में कहा है-

**ब्रह्मचर्याश्रमं समाप्य गृही भवेत्।**
**गृही भूत्वा बनी भवेत् वनी भूत्वा प्रव्रजेत्॥**

ऋषियों ने जीवन को चार आश्रमों में विभाजित किया है। ब्रह्मचर्य आश्रम को समाप्त करके गृहस्थाश्रम को धारण करें। गृहस्थ में दायित्व, कर्त्तव्य की पूर्ति करके वानप्रस्थ को धारण करें। आत्मचिंतन तथा परमात्म-चिंतन करते हुए शरीर-यात्रा पूर्ण करनी चाहिए। इस व्यवस्था से यदि जीवन व्यतीत किया जाए, तो मनुष्य जीवन के चारों पुरुषार्थ धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष सहज सिद्ध हो सकते हैं। आश्रम पद्धति से जीवन उत्तरोत्तर श्रेष्ठ, पवित्र, सुखी, शांत एवं ऊंचा उठता जायेगा। मनुष्य धीरे-धीरे इहलोक को भोगता हुआ, जीवन तथा जगत की वास्तविकताओं को समझता हुआ जीवन के लक्ष्य की ओर अग्रसर होने लगता है। यह मध्यमवर्ग जीवन के लिए उपयोगी तथा व्यवहारिक है। ब्रह्मचर्य से लेकर संन्यासाश्रम तक पदोन्नति अत्यंत दुर्लभ है।

गृहस्थाश्रम सभी आश्रमों का आधार है। इस आश्रम को सभी शास्त्रों एवं ऋषियों ने ज्येष्ठ व श्रेष्ठ माना है। मनु ने कहा है- जैसे सब नदी नद समुद्र में जाकर आश्रय पाते हैं उसी प्रकार सब आश्रमों के लिए गृहस्थ के सहयोग से जीवन-यात्रा चलाते हैं। अधिकांश ऋषि-मुनि संत तथा महापुरुषों ने गृहस्थ धर्म का निर्वाह किया है। गृहस्थ से ही संतान परम्परा चलती है। गृहस्थ से जीवन संयमित, व्यवस्थित एवं पूर्णता को प्राप्त करता है। कामवासना के शमन का व्यावहारिक, स्वस्थ सृष्टि, व्यवस्थानुकूल तथा समाजानुमोदित व्यवस्था गृहस्थ में है।

गृहस्थ में लोकेषणा, पुत्रेषणा, वित्तेषण आदि की पूर्ति होती है। जब तक व्यक्ति सांसारिक, भौतिक और इंद्रिय सुखों को भोग नहीं लेता है, तब तक भोगों की वासना, ललक, इच्छा, आकर्षण आदि बना रहता है। इसलिए भारतीय जीवन-शैली में आम आदमी के लिए गृहस्थ धर्म की व्यवस्था की गई है। भारतीय चिंतन कहता है- भोग से योग की ओर, प्रवृत्ति से निवृत्ति की ओर तथा भौतिकता से आध्यात्मिकता की ओर बढ़ना ही जीवन की श्रेष्ठता एवं सुंदरता है। जो लोग दिन-रात दुनियादारी, भोग-वासनाओं, इच्छाओं और शरीर की सोच तक ही सीमित रहते हैं उनका जीवन अधूरा है। जीवन के सफर में गृहस्थ एक पड़ाव है। मंजिल इससे बहुत आगे है। यदि जीवन तथा जगत को ज्ञानपूर्वक, नियमपूर्वक एवं त्यागपूर्वक भोगा जाए तो वृद्धावस्था के आते-आते ज्ञान विवेक, वैराग्य, शांति एवं संतोष आ जाना चाहिए। यदि नहीं आता है तो समझो हमने संसार व गृहस्थ को पशुवत् और बेहोशी में भोगा है। वृद्धावस्था तक आते-आते व्यक्ति को इंद्रिय सुखों से ऊपर उठ जाना चाहिए। ऐसे व्यक्तियों का ही जीवन व जगत सुखी शांत एवं प्रसन्न रहता है।

वर्तमान में भौतिकवाद और भोगवाद की प्रवृत्ति ने समूचे मानव-समाज के जीवन मूल्यों, आदर्शों, व्यवस्थाओं आदि को बुरी तरह हिलाकर रख दिया है। इसी कारण गृहस्थ जीवन जो स्वर्ग व सुख का आधार था। वह नरक, दुख, अशांति, कलह आदि का घर बनता जा रहा है। विवाह-संस्था विकृत हो रही है। व्यक्ति बिखर रहा है। परिवार टूट रहे हैं। बच्चे संस्कारहीन होकर बुराईयों की ओर बढ़ रहे हैं। इससे पारिवारिक जीवन को बड़ा धक्का लग रहा है। इससे घर के बुजुर्ग उपेक्षित और दुखी होते हैं, एक पिता पांच बच्चों को पालकर बड़ा कर देता था। आज पांच लड़के माता-पिता को नहीं संभाल पा रहे हैं। आज बड़े-बूढ़े अनाथ हो रहे हैं। पाश्चात्य सभ्यता में 'प्रयोग करो और फेंक दो' का प्रचलन है। वे कप-प्लेट, कपड़े, जूते, फर्नीचर आदि का प्रयोग करते हैं। ○○

# समाचार - सूचनाएं

- केंद्रीय आर्य युवक परिषद के तत्वावधान में महर्षि दयानन्द का 195वां जन्मोत्सव श्रीमती मीनाक्षी लेखी के निवास पर मनाया जाएगा।
- 11 जनवरी लालबहादुर शास्त्री स्मृति दिवस। 23 जनवरी नेताजी सुभाषचंद्र बोस जयंती। 28 जनवरी लाला लाजपत राय जयंती। 30 जनवरी महात्मा गांधी पुण्य तिथि। सभी महान पुरुषों, देशभक्तों को उनके जन्म व स्मृति दिवस पर याद किया गया।
- आर्य समाज, आर्ष गुरुकुल, वानप्रस्थाश्रम नोएडा में भारत वर्ष का 70वां गणतंत्र दिवस बड़ी धूमधाम से मनाया गया। ध्वजारोहण के पश्चात ब्रह्मचारियों द्वारा भाषण, गीत प्रतियोगिताएं प्रस्तुत की गई। सभी को प्रधान जी द्वारा पारितोषिक दिए गए।
- महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मारक ट्रस्ट टंकारा (राजकोट, गुजरात) ऋषि बोधोत्सव 3 मार्च से 5 मार्च 2019।
- 195वां महर्षि दयानन्द जन्मोत्सव 1 मार्च 2019 प्रात: 9 बजे से महर्षि दयानन्द गौसंवर्धन केंद्र, गाजीपुर दिल्ली।
- रतलाम (मध्य प्रदेश) : आर्य समाज के संस्थापक, चिंतक और देशभक्त महर्षि स्वामी दयानंद सरस्वती के 195वें जन्मदिवस के उपलक्ष्य में आर्य समाज इंदिरानगर व महर्षि दयानंद सरस्वती वैदिक विद्यालय द्वारा प्रभातफेरी निकाली गई। हवन का आयोजन किया गया। प्रभातफेरी में ओ३म् का झंडा ऊंचा रहे...वेद की ज्योति जलती रहेगी..आर्य समाज अमर रहेगा जैसे जयकारे लगाए गये। आर्य समाज के पदाधिकारी, शिक्षक, शिक्षिकाएं और ओ३म् का ध्वज लिए विद्यार्थी शामिल हुए। प्रभातफेरी इंदिरा नगर स्थित आर्य समाज यज्ञशाला परिसर से शुरू हुई शहर के प्रमुख मार्गो से होती हुई पुन: यज्ञशाला पहुंची।
- पानीपत (हरियाणा) : देश भक्ति के गीतों के साथ आर्य समाज हुडा सेक्टर-12 का तीन दिवसीय वार्षिकोत्सव संपन्न हुआ। सुबह हवन यज्ञ के बाद होशंगाबाद (मध्य प्रदेश) से आए आचार्य योगेंद्र याज्ञिक ने स्वामी दयानंद के दिखाए मार्ग पर चलने का आह्वान किया। उन्होंने कहा कि जो पूंजी हमें स्वामी जी देकर गए हैं। हमें उसे संभालने के साथ-साथ बढ़ाना होगा। आर्य ध्वजा युवाओं को सौंपनी होगी। वर्तमान समय में समाज में जो नई-नई समस्याएं देखने को मिल रही है उनका एक ही उपचार है हमें जीने की कला सीखने होगी। घर चाहे कितना ही बड़ा हो वह तब तक सुंदर नहीं हो सकता जब तक उस घर में रहने वाले बुजुर्गों के चेहरे पर हंसी न हो। यह सब परिवार में सामंजस्य से आएगा।

**सूचना :** आदरणीय सदस्यों से निवेदन है कि आपकी प्रिय मासिक पत्रिका 'विश्ववारा संस्कृति' मानवीय जीवन मूल्यों की संरक्षक पत्रिका निरंतर प्रकाशित हो रही है और आप तक समय पर पहुंच रही है।
आपने सदस्यता ग्रहण करके वैदिक संस्कृति के प्रचार-प्रसार हेतु जो सहयोग प्रदान किया तदर्थ धन्यवाद!
कुछ सदस्यों का मासिक सदस्यता शुल्क जनवरी 2018 को समाप्त हो गया है फिर भी पत्रिका निरंतर प्रेषित की जा रही है। अधिक समय तक शुल्क न मिलने पर पत्रिका का प्रेषण करना संभव नहीं हो पाएगा। अतः आपसे निवेदन है कि अपना शुल्क भेजकर सहयोग प्रदान करें।
चैक/मनीआर्डर 'आर्यसमाज' के नाम भिजवाएं अथवा आप लोग सीधे ही 'यूनाइटेड बैंक ऑफ इंडिया', नोएडा सेक्टर-33 में खाता संख्या A/C No. 1483010100282, IFSC- UTB10SCN560 में जमा करा कर रसीद की प्रतिलिपि निम्न पते पर भेजें।

■ प्रबंध संपादक, 'विश्ववारा संस्कृति', आर्य समाज, बी-69, सेक्टर-33, नोएडा (उ.प्र.) मोबाइल : 9871798221, 7011279734

# 'विश्ववारा संस्कृति' के नियम व सविनय निवेदन

1. यदि 'विश्ववारा संस्कृति' दिनांक 15 तारीख तक नहीं पहुंचती है तो आप प्रबंध संपादक के नाम पत्र डालें। पत्र मिलते ही 'विश्ववारा संस्कृति' पुनः भेज दी जायेगी।

2. वार्षिक शुल्क तथा आजीवन शुल्क मनीआर्डर द्वारा आर्य समाज, बी-69, सेक्टर-33, नोएडा के नाम भेजें। वीपी, रजिस्ट्री द्वारा पत्रिका नहीं भेजी जायेगी।

3. लेख प्रबंध संपादक 'विश्ववारा संस्कृति' के नाम भेजें, लेख छोटे, सरल, संक्षिप्त होने चाहिए तथा स्पष्ट, शुद्ध एवं सुंदर लेख कागज के एक ओर लिखे होने चाहिए।

4. 'विश्ववारा संस्कृति' में विज्ञापन भी दिये जाते हैं, परंतु विज्ञापन शुद्ध एवं वास्तविक वस्तु का ही लिया जायेगा।

5. यह 'विश्ववारा संस्कृति' पत्रिका समाज-सुधार की दृष्टि से मानव कल्याणार्थ निकाली जाती है। इसमें आपको धर्म, यज्ञ, कर्म, समाज सुधार, देश व समाज की स्थिति, ब्रह्मचर्य, स्वास्थ्य, योगासन, सदाचार, संस्कार, नैतिकता, वैदिक विचार, शिक्षा आदि एवं अन्य विषयों पर हिंदी, अंग्रेजी व संस्कृत के लेख पढ़ने को मिलेंगे।

6. 'विश्ववारा संस्कृति' के दस ग्राहक बनाने वाले सज्जन को एक वर्ष तक निःशुल्क 'विश्ववारा संस्कृति' भेजी जायेगी तथा पचास ग्राहक बनाने वाले सज्जन को दो वर्ष निःशुल्क पत्रिका भेजी जायेगी तथा उसका फोटो सहित जीवन-परिचय 'विश्ववारा संस्कृति' में निकाला जायेगा।

7. अन्य पत्र-पत्रिकाओं में पहले छपा हुआ लेख 'विश्ववारा संस्कृति' में नहीं छापा जायेगा।

8. अनाधिकृत रूप से लिए लेख, रचना, कविता के लिए प्रेषक ही उत्तरदायी होंगे।

**आर्य कै. अशोक गुलाटी**
**प्रबंध संपादक**

**'विश्ववारा संस्कृति'**
**आर्य समाज, बी-69, सेक्टर-33, नोएडा, उप्र**
**संपर्क सूत्र : 0120-2505731, 9871798221, 7011279734**
**ई-मेल : info.aryasamajnoida33@gmail.com**
**captakg21@yahoo.co.in**

## मुख्य घटनाएं जिन्हें मूलशंकर को स्वामी दयानंद बनने की राह पर अग्रसित किया

**पहली घटना :** मूल शंकर के पिता शिव के परम भक्त थे। वर्ष 1837 के माघ माह में पिता के कहने पर बालक मूलशंकर ने भगवान शिव का व्रत रखा। तब उनकी उम्र मात्र 14 वर्ष की थी। जागरण के दौरान अर्द्धरात्रि में उनकी नजर मन्दिर में स्थित शिवलिंग पर पड़ी, जिस पर चूहे उछल-कूद मचा रहे थे। एकाएक बालक मूलशंकर के मन में विचार आया कि जिसे हम भगवान मान रहे हैं, वह इन चूहों को भगाने की शक्ति भी नहीं रखता तो वह कैसा भगवान? दूसरी घटना : जब मूलशंकर 16 वर्ष के थे तो उनकी चौदह वर्षीय छोटी बहन की मौत हो गई। वे अपनी बहन से बहुत प्यार करते थे। पूरा परिवार व सगे-संबंधी विलाप कर रहे थे और मूलशंकर भी गहरे सदमे व शोक में भाव-विह्वल थे। तभी उनके मनोमस्तिष्क में कई तरह के विचार पैदा हुए। इस संसार में जो भी आया है, उसे एक न एक दिन यहां से जाना ही पड़ेगा, अर्थात् सबकी मृत्यु होनी ही है और मौत जीवन का शाश्वत सत्य है। अगर ऐसा है तो फिर शोक किस बात का? क्या इस शोक और विलाप की समाप्ति का कोई उपाय हो सकता है? तीसरी घटना : जब विक्रमी संवत 1899 में उनके प्रिय चाचा ने उनके सामने बेहद व्यथा एवं पीड़ा के बीच दम तोड़ा।

(क्रमशः)

# मशरूम डिमेंशिया और अल्जाइमर से बचा सकता है

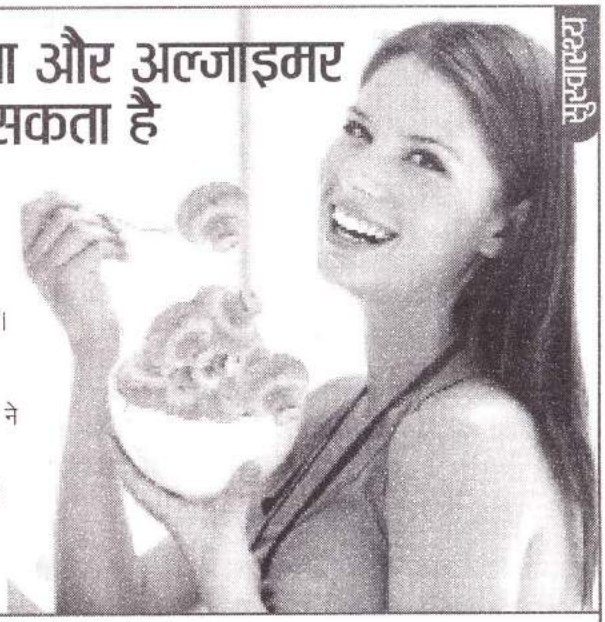

**मशरुम** खाने से डिमेंशिया और अल्जाइमर जैसी उम्र संबंधी न्यूरोडिजिनेरेटिव बीमारियों से बचा या उनको कुछ समय के लिए टाला जा सकता है। न्यूरोडिजिनेरेटिव शब्द का इस्तेमाल तंत्रिका कोशिकाओं को नुकसान पहुंचने की प्रक्रिया के लिए किया जाता है। शोधकर्ताओं में भारतीय मूल का एक शोधकर्ता भी शामिल है।

**मशरुमों में बायोएक्टिव यौगिक होते हैं :** शोधकर्ताओं ने दावा किया है कि कुछ खाद्य और औषधीय मशरुमों में ऐसे बायोएक्टिव यौगिक होते हैं जो मस्तिष्क में तंत्रिका कोशिकाओं की वृद्धि बढ़ा सकते हैं और सूजन जैसी न्यूरोटोक्सिस उत्तेजनाओं से रक्षा करते हैं जो न्यूरोडिजिनेरेटिव बीमारियों का कारण बनती है।

- **कुछ खाद्य और औषधीय मशरुमों में ऐसे बायोएक्टिव यौगिक होते हैं जो मस्तिष्क में तंत्रिका कोशिकाओं की वृद्धि बढ़ा सकते हैं**
- **मशरुम उम्र संबंधी न्यूरोडिजिनेरेटिव बीमारियों से बचने या उन्हें कुछ समय के लिए टालने में अहम् भूमिका निभाते हैं**

**मशरुम के स्वास्थ्य पर पड़ने वाले फायदों का विश्लेषण करने पर :** मलेशिया में 'मलाया विश्वविद्यालय' से विकिनेश्वर्य सबारत्नम समेत शोधकर्ताओं ने खाने योग्य मशरुम के स्वास्थ्य पर पड़ने वाले फायदों का विश्लेषण किया। उन्होंने बताया कि शोध के नतीजों से पता चला कि मशरुम उम्र संबंधी न्यूरोडिजिनेरेटिव बीमारियों से बचने या उन्हें कुछ समय के लिए टालने में अहम् भूमिका निभाते हैं।

## कार्डियोमेटाबोलिक बीमारियां और कैंसर

अमेरिका की 'यूनीवर्सिटी ऑफ सेंट्रल फ्लोरिडा' के संपत पार्थसारथी ने कहा, 'कार्डियोमेटाबोलिक बीमारियों और कैंसर में फायदेमंद साबित होने वाले खाद्य पदार्थों के विपरीत न्यूरोडिजिनेरेटिव बीमारियों के लिए फायदेमंद खाद्य पदार्थों पर केंद्रित बहुत कम अध्ययन हुए हैं। इस हालिया अध्ययन से तंत्रिका कोशिकाओं की रक्षा करने वाले और खाद्य सामग्री की पहचान करने के लिए प्रोत्साहन मिल सकता है।'

## तंत्रिका कोशिकाओं की रक्षा :

शोधकर्ताओं ने मशरुमों के बायोएक्टिव यौगिकों की गतिविधि पर ध्यान केंद्रित किया जिससे तंत्रिका कोशिकाओं की रक्षा हो सकती है।

**शोध के नतीजों से पता चला कि मशरुम उम्र संबंधी न्यूरोडिजिनेरेटिव बीमारियों से बचने या उन्हें कुछ समय के लिए टालने में अहम भूमिका निभाते हैं**

# अखिल भारतीय संस्कृत आर्ययुव महोत्सव की झलकियां (संस्कृत नाटक के छाया चित्र)

नेताजी सुभाष चंद्र बोस के जन्मोत्सव के अवसर पर प्रयास स्पेशल दिव्यांग स्कूल के द्वारा 'लेजेन्ड ऑफ सुभाष चंद्र अवार्ड' से सम्मानित होते आर्य कै. अशोक गुलाटी। इस अवसर पर शहीद चंद्रशेखर आजाद के पोते भी साथ में हैं।

रोहतक में सुमेर चंद्र आर्य स्मृति दिवस के अवसर पर सम्मानित होते आर्य कै. अशोक गुलाटी।


# विश्ववारा संस्कृति

आर्य समाज, बी-69, सैक्टर-33, नोएडा (उ.प्र.) दूरभाष : 0120-2505731, 9871798221